

श्रीहित सेवक वाणी

- [1. श्रीहित जस विलास प्रकरण](#)
- [2. श्रीहित रस-विलास प्रकरण](#)
- [3. श्रीहित नाम-प्रताप जस प्रकरण](#)
- [4. श्रीहित वाणी प्रताप प्रकरण](#)
- [5. श्रीहित इष्टाराधन प्रकरण](#)
- [6. श्रीहित धर्मानि - कृत्त प्रकरण](#)
- [7. श्रीहित रस-रीति प्रकरण](#)
- [8. श्रीहित अनन्य टेक प्रकरण](#)
- [9. श्रीहित अकृपा-कृपा प्रकरण](#)
- [10. श्रीहित भक्त-भजन प्रकरण](#)



[11. श्रीहित ध्यान प्रकरण](#)

[12. श्रीहित मंगल गान प्रकरण](#)

[13. श्रीहित पाके धर्मी प्रकरण](#)

[14. श्रीहित काचे धर्मी प्रकरण](#)

[15. श्रीहित अलभ्य लाभ प्रकरण](#)

[16. श्रीहित मान सिद्धांत प्रकरण](#)

फल स्तुति



1. श्रीहित जस विलास प्रकरण



श्रीहरिवंश-चन्द्र शुभ नाम । सब सुख सिन्धु प्रेम रस धाम ।
जाम-घटी बिसरै नहीं ॥

यह जु पर्यौ मोहि सहज सुभाव । श्रीहरिवंश नाम रस चाव ।
नाव सुदृढ़ भव तरन कै ॥

नाम रटत आई सब सोहि । देहु सुबुद्धि कृपा करि मोहि ।
पोहि सुगुन माला रचै ॥



नित्य सुकंठ जु पहिरौं तास । जस बरनौं हरिवंश विलास ।
 श्रीहरिवंशहि गाइ हौं ॥ १ ॥

श्रीवृन्दावन वैभव जिती । वरनत बुद्धि प्रमानौ किती ।
 तिती सबै हरिवंश की ॥

सखी-सखा क्यौं कहौं निवेर । तौ मेरे मन की अवसेर ।
 टेरि सकल प्रभुता कहौं ॥





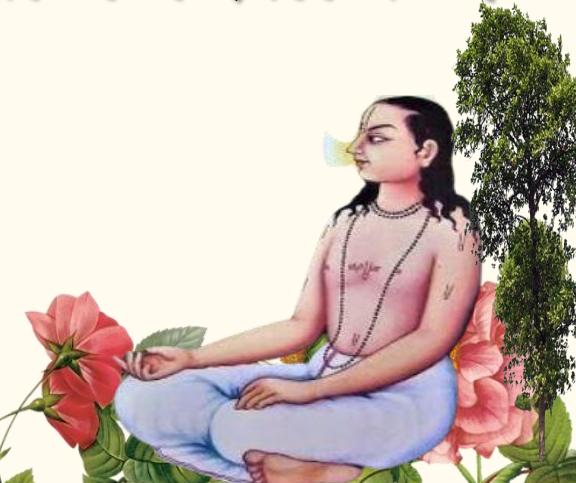
हरि-हरिवंश भेद नहि होय । प्रभु ईश्वर जानें सब कोइ ।
दोइ कहैं न अनन्यता ॥

विश्वम्भर सब जग आभास । जस बरनौं श्रीहरिवंश विलास ।

श्रीहरिवंशहि गाइ हौं ॥२॥

जन्म-कर्म गुण रूप अपार । बाढ़े कथा कहत विस्तार ।

बार-बार सुमिरन करौं ॥

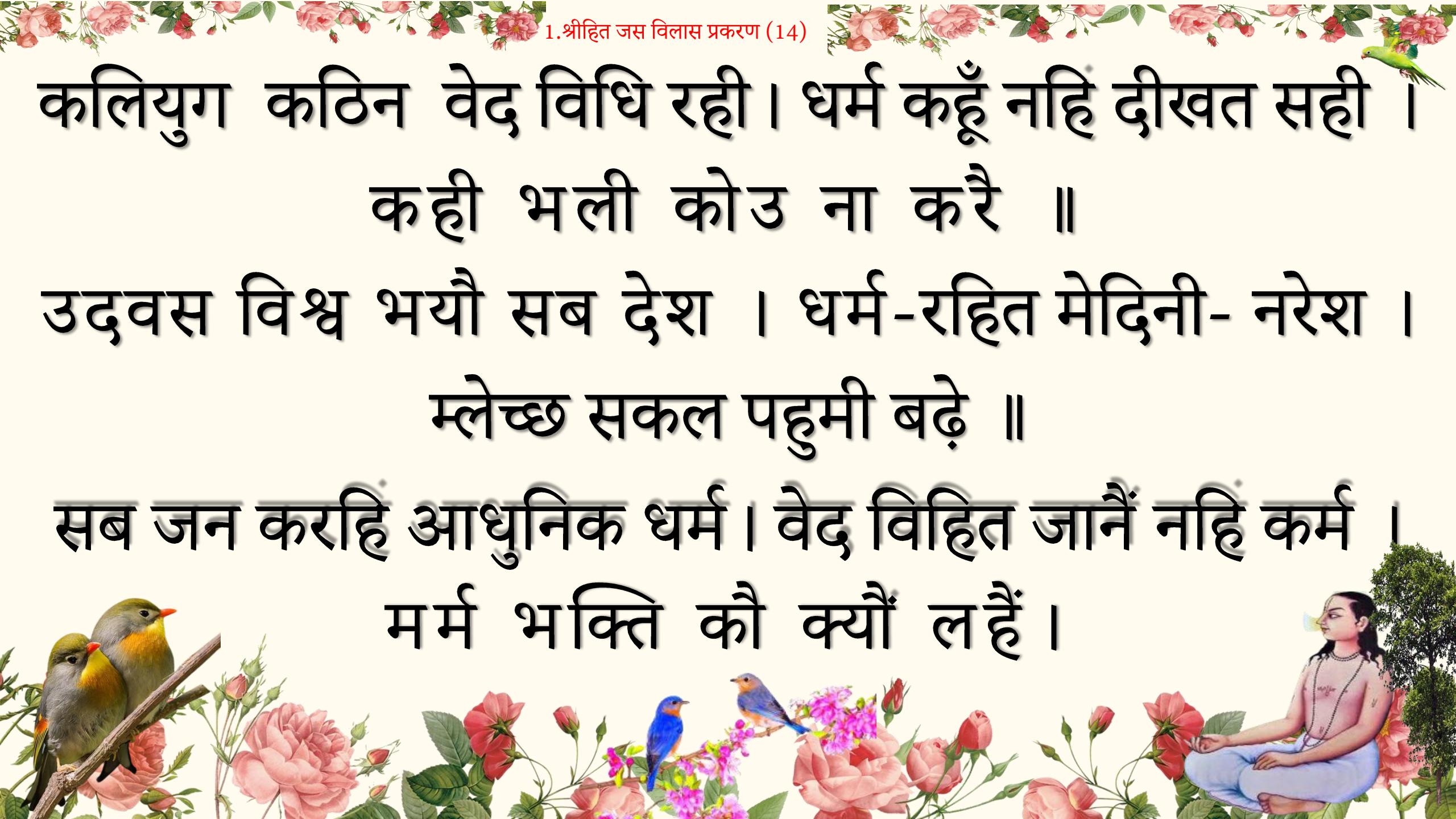




हैं लघु मति जु अन्त नहि लहैं । बुद्धि प्रमान कछू कथि कहैं ।
 रहैं शरण हरिवंश की ॥
 सोधौं कहि मोहि केतिक मती । जस वरनत हारै सरस्वती ।
 तिती सबै हरिवंश की ॥
 देहु कृपा करि बुद्धि प्रकाश । जस वरनौं श्रीहरिवंश विलास ।
 श्रीहरिवंश हि गाइ हैं ॥३॥



कलियुग कठिन वेद् विधि रही । धर्म कहूँ नहि दीखत सही ।
 कही भली कोउ ना करै ॥
 उद्वस विश्व भयौ सब देश । धर्म-रहित मेदिनी- नरेश ।
 म्लेच्छ सकल पहुमी बढ़े ॥
 सब जन करहि आधुनिक धर्म । वेद् विहित जानै नहि कर्म ।
 मर्म भक्ति कौ क्यौं लहै ।





बूङ्डत भव आवै न उसास । जस वरनौं हरिवंश विलास ।

श्रीहरिवंशहि गाइ हौं ॥4॥

धर्म-रहित जानी सब दुनी । म्लेच्छन भार दुखित मेदनी ।

धनी और दूजौ नहीं ॥

करी कृपा मन कियौ विचार । श्रुतिपथ बिमुख दुखित संसार ।

सार वेद-विधि उद्धरी ॥



सब अवतार भक्ति विस्तरी । पुनि रस रीति जगत उद्धरी ।
 कर्यो धर्म अपनौं प्रगट ॥
 प्रगटे जानि धर्म कौ नास । जस वरनौं हरिवंश विलास ।
 श्रीहरिवंशहि गाइ हैं ॥५॥
 मथुरा मंडल भूमि आपुनी । जहाँ 'बाद' प्रगटे जग धनी ।
 भनी अवनि वर आप मुख ॥



शुभ वासर शुभ ऋक्ष विचारि । माधव मास ग्यास उजियारि ।

नारिनु मंगल गाइयौ ॥

तच्छिन देव-दुन्दुभी बाजिये । जै-जै शब्द सुरन मिलि किये ।

हियैं सिराने सबनि के ॥

तारा जननि जनक ऋषि व्यास । जस बरनौं हरिवंश विलास ।

श्रीहरिवंशहि गाइ हौं ॥ 6 ॥



श्रीभागवत जु शुक उच्चरी । तैसी विधि जु व्यास विस्तर।

करी नन्द जैसी हुती ॥

घर-घर तोरन बन्दनवार । घर-घर प्रति चिलहि दरबार।

घर-घर पंच शब्द बाजिये ॥

घर-घर दान प्रतिग्रह होइ । घर-घर प्रति निर्तत सब कोइ ।

घर-घर मंगल गावहीं ॥



घर-घर प्रति अति होत हुलास । जस करनौं श्रीहरिवंश विलास ।

श्रीहरिवंशहि गाइ हौं ॥७॥

निर्जल सजल सरोवर भये । उखटे वृक्षनि पल्लव नये ॥

दये सकल सुख सबनि कौं ॥

असन शयन सुख नित-नित नये । अन्न सुकाल चहूँ दिशि भये ।

गये अशुभ सब विश्व के ॥



amy stock photo





मलेछ सकल हरि जस विस्तरहि । परम ललित बानी उच्चरहि ।

करहि प्रजा पालन सबै ॥

अपनी-अपनी रुचि बस वास । जस वरनौ हरिवंश विलास ।

श्रीहरिवंशहि गाइ हौं ॥८॥

चलहि सकल जन अपने धर्म । ब्राह्मण सकल करहि षट् कर्म ।

भर्म सबनि कौ भाजियौ ॥





छूटि गई कलियुग की रीति । नित नित नव-नव होत समीति ।

प्रीति परस्पर अति बढ़ी ॥

प्रगट होत ऐसी विधि भई । सब भवजनित आपदा गई ।

नई-नई रुचि अति बढ़ी ॥

सब जन करहि धर्म अभ्यास । जस बरनौं हरिवंश विलास ।

श्रीहरिवंशहि गाइ है ॥९॥



बाल विनोद न बरनत बनहि । अपनौ सौ उपदेशत मनहि ।
 गनहि कवन लीला जिती ॥
 सब हरि-सम गुण-रूप अपार । महापुरुष प्रगटे संसार ।
 मार विमोहन तन धयौ ॥
 छिन न तृपित शुभ दर्शन आस । दुलरावत बोलत मृदु हास ।
 व्यासमिश्र कौ लाडिलौ ॥



मुदित सकल नहि छाँड़त पास । जस बरनौं हरिवंश विलास ।

श्रीहरिवंशहि गाइ हौं ॥ 10 ॥

अब उपदेश भक्ति कौ कह्यौ । जैसी विधि जाके चित रह्यौ ।

लह्यौ जु मन वांछित सफल ॥

सब हरिभक्ति कही समुझाइ । जैसी-जैसी जाहि सुहाइ ।

आइ सकल चरनन भजे ॥





साधन सकल कहे अविरुद्ध । वेद-पुरान सु आगम शुद्ध
 बुधि विवेक जे जानहीं ॥
 समुझ्यौ सबनि सु भक्ति उजास । जस वरनौ हरिवंश विलास ।
 श्रीहरिवंश हि गाइ हैं ॥ ११ ॥
 अब अवतार भेद तिन कहे । सकल उपासक तिन मन रहे ॥
 कहे भक्ति साधन सबै ॥



मथुरा नित्य कृष्ण कौ वास । निशि-दिन श्याम न छाँड़त पास ।

तासु सकल लीला कही ॥

कही सबनि की एकै रीति । श्रवन-कथन सुमिरन परतीति ।

बीति काल सब जाइयै ॥

उपज्यौ सबनि सुहृढ़ विश्वास । जस वरनौ हरिवंश विलास ।

श्रीहरिवंशहि गाइ हौं ॥12॥



अब जु कही सब ब्रज की रीति । जैसी सबन नन्द-सुत प्रीति ।
 कीर्ति सकल जग विस्तरी ॥
 बाल चरित्र प्रेम की नींव । कहत- सुनत सब सुख की सींव ।
 जीवन ब्रज-वासिनु सफल ॥
 ब्रज की रीति सु अगम अपार । विस्तरि कही सकल संसार ।
 कारज सबहिनु के भये ॥



ब्रज की प्रीति-रीति अनियास । जस वरनौं हरिवंश विलास ।

श्रीहरिवंशहि गाइ हौं ॥ 13 ॥

जिहि विधि सकल भक्ति अनुसार । तैसी विधि सब कियौं विचार ।

सारासार विवेकि कैं ॥

अब निजु धर्म आपुनौं कहत । तहाँ नित्य वृन्दावन रहत ।

बहुत प्रेम-सागर जहाँ ॥



amy stock photo



साधन सकल भक्ति जा तनौं । निजु वैभव प्रगटत आपुनौं ।

भनौं एक रसना कहा ॥

श्रीराधा युग चरण निवास । जस बरनौं हरिवंश विलास ।

श्रीहरिवंशहि गाइ हौं ॥ 14 ॥

! जै जै श्रीहित जस विलास प्रथम प्रकरण की जै जै श्रीहित हरिवंश !





2. श्रीहित रस विलास प्रकरण

श्रीहरिवंश नित्य कर-केलि । बाढ़त सरस प्रेम-रस बेलि ॥

मेलि कण्ठ भुज खेलहीं ॥

बनितन-गन मन अधिक सिरात । निरखि-निरखि लोचन न अघात

गात गौर-साँवल बने ॥

जूथ- जूथ जुवतिनु के घने । मध्य किशोर-किशोरी बने ॥

गनैं कौन रति अति बढ़ी ॥





नित-नित लीला, नित-नित रास । सुनहु रसिक हरिवंश विलास ।

श्रीहरिवंशहि गाइहौं ॥ १ ॥

लता-भवन सुख शीतल छहाँ । श्रीहरिवंश रहत नित जहाँ ॥

तहाँ न वैभव आन की ॥

जब-जब होत धर्म की हानि । तब-तब तनु धरि प्रगटत आनि

जानि और दूजौ नहीं ॥



जो रस रीति सबनि तें दूरि । सो सब विश्व रही भरिपूरि ॥

मूरि सजीवन कहि दई ॥

सब जन मुदित करत मन हास । सुनहु रसिक हरिवंश विलास

श्रीहरिवंशहि गाइ हौं ॥२॥

ललितादिक श्यामा अरु श्याम । श्रीहरिवंश प्रेम रस धाम ॥

नाम प्रगट जग जानियें ॥



श्रीहरिवंश-जनित जहाँ प्रेम । तहाँ कहाँ व्रत-संयम-नेम ॥

क्षेम सकल सुख सम्पदा ॥

तहाँ जाति-कुल नहीं विचार । कौन सु उत्तम, कौन गँवार ॥

सार भजन हरिवंश कौ ॥

या रस मग्न मिटै भव-त्वास । सुनहु रसिक हरिवंश विलास ॥

श्रीहरिवंशहि गाइ हौं ॥३॥





श्रीहरिवंश सुजस गाइयौ । सो रस सब रसिकनि पाइयौ ॥

कियौ सुकृत सबकौ फल्यौ ॥

या रस में विधि नहीं निषेध । तहाँ न लगन ग्रहन के बेध ॥

तहाँ कुदिन-दिन कछु नहीं ॥

नहि शुभ-अशुभ, मान-अपमान । नहि अनृत-भ्रम, कपट-सयान

स्लान-क्रिया, जप-तप नहीं ॥



ज्ञान-ध्यान तहाँ सकल प्रयास । सुनहु रसिक हरिवंश विलास ॥

श्रीहरिवंशहि गाइ हौं ॥4॥

जहाँ श्रीहरिवंश प्रेम-उन्माद । तहाँ कहाँ स्वारथ निस्वाद ॥

वाद - विवाद तहाँ नहीं ।

जे श्रीहरिवंश-नाद मोहिये । तिन फिरि बहुरि न कुल-क्रम किये

जिये काल-बस ना परे ॥



amy stock photo





कुल बिनु कहौं कौन सौ चाक । सहज प्रेम रस साँचे पाक ॥

रंक - ईश समुझत नहीं ।

विप्र न शूद्र कौन कुल कास । सुनहु रसिक हरिवंश विलास ॥

श्रीहरिवंशहि गाइ हौं ॥५॥

या रस विमुख करत आचार । प्रेम बिना जु सबै कृत आर ॥

भार धरत कत विप्र कौ ॥





श्रीहरिवंश किशोर अहीर । अरु तिन सँग बनितन की भीर ॥

तीर जमुन नित खेलहीं ॥

तिनकी दई जु जूठन खात । आचारी निज कहत खिस्यात ॥

बात यहै साँची सदा ॥

श्रीहरिवंश कहत नित जास । सुनहु रसिक हरिवंश विलास ॥

श्रीहरिवंश हि गाइ हैं ॥6॥



निशि दिन कहत पुकारि-पुकारि । स्तुति करहु देहु कोउ गारि
हारि न अपनी मानि हौं ॥

श्रीहरिवंश चरण नहि तजौं । अरु तिनके भजतन कौं भजौं ॥
लजौं नहीं अति निडर है ॥

श्रीहरिवंश नाम बल लहौं । अपने मन भाई सब कहौं ॥
रहौं शरण हरिवंश की ॥



amy stock photo



कहृत न बनत प्रेम उज्जास । सुनहु रसिक हरिवंश विलास ॥

श्रीहरिवंशहि गाइ है ॥७॥

जे हरिवंश प्रेम रस झिले । क्यौं सोहैं लोगन में मिले ।

गिल्प्यै काल जग देखिये ॥

कर्म सकाम न कबहूँ करें । स्वर्ग न इच्छैं, नर्क न डरैं ॥

धरैं धर्म हरिवंश कौ ॥



amy stock photo



श्रीहरिवंश - धर्म निर्वहैं । श्रीहरिवंश प्रेम रस लहैं ॥

ते सब श्री हरिवंश के ॥

‘सेवक’ तिन दासनि कौदास । सुनहु रसिक हरिवंश विलास ॥

श्रीहरिवंशहि गाइ हैं ॥८॥

! जै जै श्रीहित रस विलास द्वितीय प्रकरण की जै जै श्रीहित हरिवंश !



alamy stock photo



3. ਸ਼੍ਰੀਹਿਤ ਨਾਮ ਪ੍ਰਤਾਪ ਜਸ ਪ੍ਰਕਰਣ





श्रीहरिवंश नाम नित कहौँ । नाम प्रताप नाम फल लहौँ ।

नाम हमारी गति सदा ॥

जे सेवैं हरिवंश सुनाम । पावैं तिन चरणन विश्राम ॥

नाम रटन संतत करैं ।

नाम प्रसंग कहत उपदेश । जहुँ यह धर्म धन्य सो देश ॥

धन्य सुकुल जिहि जन्म भयौ ॥





धन्य सु तात धन्य सो माइ । संतत सकल सुनहु चित लाइ ॥

श्रीहरिवंश प्रताप जस ॥१॥

प्रथम हृदय श्रद्धा जो करै । आचारजनि जाइ अनुसरै ॥

जहाँ - जहाँ हरिवंश के ॥

रसिकनि की सेवा जब होइ । प्रीति सहित बूझहु सब कोइ ।

कौन धर्म हरिवंश कौ ॥





कौन सुरीति, कौन आचरन । कौन सुकृत जिहि पावै शरन ॥
क्यौं हरिवंश कृपा करें ॥

तब सब धर्म कह्यौ समुझाइ । संतत सकल सुनहु चित लाइ ॥
श्रीहरिवंश प्रताप जस ॥२॥

प्रथमहि सेवहु गुरु के चरन । जिन यह धर्म कह्यौ सब करन ॥
नाम-प्रताप बताइयौ ॥





जो हरिवंश नाम अनुसरहु । निशिदिन गुरु कौ सेवन करहु ॥

सकल समर्पन प्राण-धन ॥

गुरु-सेवा तजि करहि जे बानि । यहै अधर्म, यहै सब हानि ॥

कानि न रसिकन में रहै ॥

गुरु-गोविन्द न भेद कराइ । संतत सकल सुनहु चित लाइ ॥

श्रीहरिवंश प्रताप जस ॥३॥





गुरु उपदेश सुनहु सब धर्म । श्रीहरिवंश-नाम फल-मर्म ॥
भर्म भग्यौ बचनन सुनत ॥

शुक-मुख-वचन जु श्रवन सुनावहु । तब हरिवंश सुनाम कहावहु
मन सुमिरन बिसरै नहीं ॥

हरि-गुरु-चरन-सेवा अनुसरहु । अर्चन-वंदन संतत करहु ॥

दासंतन करि सुख लहै ॥





सख्य समर्पन भक्ति बढ़ाइ । संतत सकल सुनहु चित लाइ ॥

श्रीहरिवंश प्रताप जस ॥4॥

गुरु-उपदेश चलहु यह चाल । ऐसी भक्ति करहु बहु काल ॥

ये नव लक्षण भक्ति के ॥

यह हरि-भक्ति करै जब कोई । तब हरिवंश नाम रति होइ

यह जु बहुत हरि की कृपा ॥





हरि-हरिवंश भेद नहि करै । श्रीहरिवंश नाम उच्चरै ॥

छिन-छिन प्रति बिसरै नहीं ॥

प्रीति सहित यह नाम कहाइ । संतत सकल सुनहु चित लाइ ॥

श्रीहरिवंश प्रताप जस ॥5 ॥

गुरु-उपदेश चलहु एहि रीति । श्रीहरिवंश-नाम-पद-प्रीति ॥

प्रेम-मूल यह नाम है ॥





प्रेमी रसिक जपत यह नाम । प्रेम मगन निज वन विश्राम ॥
श्रीहरिवंश जहाँ रहैं ॥

प्रेम-प्रवाह परे जन सोइ । तब क्यौं लोक-वेद-सुधि होइ ॥
जब श्रीहरिवंश कृपा करी ॥

व्रत-संयम तब कौन कराइ । संतत सकल सुनहु चित लाइ ॥
श्रीहरिवंश प्रताप जस ॥6॥





जब यह नाम हृदय आइ है । तब सब सुख सम्पत्ति पाइ है ।

श्रीहरिवंश सुजस कहै ॥

अरु अपनी प्रभुता नहि सहै । तृण तें नीच अपनपौ कहै ।

शुभ अरु अशुभ न जानहीं ॥

समुझै नहीं कछू कुल-कर्म । सूधै चलै आपने धर्म ॥

रसिकनि सौं प्रीतम कहै ॥





कबहूँ काल वृथा नहि जाइ । संतत सकल सुनहु चित लाइ ॥

श्रीहरिवंश प्रताप जस ॥७ ॥

जब श्रीहरिवंश नाम जानि है । तब सब हीं तें लघु मानि है ।

हँसि बोलै बहु मान दै ॥

तरु सम सहन शीलता होइ । परम उदार कहैं सब कोइ ॥

सोच न मन कबहूँ करै ॥





श्रीहरिवंश सुजस मन रहै । कोमल वचन रचन मुख कहै ।

परम सुखद सब कौं सदा ॥

दुखद वचन कबहूँ न कहाइ । संतत सकल सुनहु चित लाइ ॥

श्रीहरिवंश प्रताप जस ॥८॥

प्रगट धर्म जैसे जानिये । श्रीहरिवंश नाम जा हिये ॥

नाम सिद्धि पहिचानियें ॥





श्रीहरिवंश नाम सब सिद्धि । सबै रसिक विलसैं नव-निद्धि ॥

भुगतैं, दैहि न जाँचहीं ॥

पोषण भरण न चिन्त कराहि । श्रीहरिवंश विभव विलसाहि ॥

वृन्दावन की माधुरी ॥

गुन गावत जु रसिक सचु पाइ । संतत सकल सुनहु चित लाइ

श्रीहरिवंश प्रताप जस ॥९॥





श्रीहरिवंश धर्म जे धरहि । श्री हरिवंश नाम उच्चरहि ॥
ते सब श्रीहरिवंश के ॥

श्रवण सुनहि जे श्रीहरिवंश । मुख बरनत बाणी हरिवंश ॥
मन सुमिरन हरिवंश कौ ॥

ऐसे रसिक कृपा जो करहि । तौ हमसे सेवक निस्तरहि ॥
जूठन लै पावैं सदा ॥





‘सेवक’ शरण रहै गुण गाइ । संतत सकल सुनहु चित लाइ ॥
श्रीहरिवंश प्रताप जस ॥10॥

! जै जै श्रीहित नाम प्रताप तृतीय प्रकरण की जै जै श्रीहित हरिवंश !



4. श्रीहित वाणी प्रताप प्रकरण





समुझौ श्रीहरिवंश सुबानी । रसद मनोहर, सब जग जानी ॥
 कोमल,ललित, मधुर पद श्रेंनी । रसिकन कौं जु परम सुख दैंनी
 श्रीहरिवंश नाम उच्चार । नित बिहार रस कह्यौ अपार ॥
 श्रीवृन्दावन-भूमि बखानौं । श्रीहरिवंश कहे ते जानौं ॥
 श्रीहरिवंश-गिरा रस सूधी । कछु नहि कहौं आपनी बूधी ॥
 श्रीहरिवंश -कृपा मति पाऊँ । तब रसिकनि कौं गाइ सुनाऊँ





श्रीहरिवंश जु श्रीमुख भाखी । सो वन-भूमि चित्त में राखी ॥
 हैं लघु मति नहि लहैं प्रमाना । जानत श्रीहरिवंश सुजाना ॥
 नव पल्लव-फल-फूल अनन्ता । सदा रहत ऋतु शरद-बसन्ता
 श्रीवृन्दावन सुन्दरताई । श्रीहरिवंश नित्य प्रति गाई ॥

॥2॥





श्रीवृन्दावन नव-नव कुंज । श्रीहरिवंश प्रेम-रस पुंज ॥
 श्रीहरिवंश करत नित केली । छिन-छिन प्रति नव-नव रस झेली ॥
 कबहुँक निर्मित तरल हिडोला । झूलत फूलत करत कलोला ॥
 कबहुँक नव दल सेज रचावहि । श्रीहरिवंश सुरत रति-गावहि ॥

॥13॥





सुरत अन्त छबि बरनि न जाई । छिन-छिन प्रति हरिवंश जु गाई ॥
 आजु सँभारत नाहिन गोरी । अंग-अंग छबि कहौं सु थोरी ॥
 नैन-बैन-भूषन जिहि भाँती । यह छबि मोपै बरनि न जाती ॥
 प्रेम-प्रीति रस-रीति बढ़ाई । श्रीहरिवंश बचन सुखदाई ॥

॥4 ॥





वंश बजाइ विमोहित नारी । बोलीं संग सु नित्य-बिहारी ॥
 परिरम्भन चुंबन रस केली । विहृत कुँवर कंठ भुज मेली ॥
 सुन्दर रास रच्यौ वन माँहीं । जमुना-पुलिन कल्पतरु-छाँही
 रास-रंग-रति वरनी न जाई । नित-नित श्रीहरिवंश जु गाई ॥

॥5॥





श्रीहरिवंश प्रेम-रस गाना । रसिक विमोहित परम सुजाना ॥
 अंसन पर भुज दिये विलोकत । तृष्णित न सुन्दर मुख अवलोकत ।
 इन्दु वदन दीखत विवि ओरा । चारु सुलोचन तृष्णित चकोरा ॥
 करत पान रस-मत्त सदाई । श्रीहरिवंश प्रेम-रति गाई ॥

॥6॥





श्रीहरिवंश सुरीति सुनाऊँ । श्यामा-श्याम एक सँग गाऊँ ॥
 छिन इक कबहुँ न अन्तर होई । प्राण सु एक देह हैं दोई ॥
 राधा संग बिना नहि॑ श्याम । श्याम बिना नहि॑ राधा नाम ॥
 छिन-छिन प्रति आराधत रहर्ही॑ । राधा नाम श्याम तब कहर्ही॑ ॥
 ललितादिकन संग सचु पावै॑ । श्रीहरिवंश सुरत-रति गावै॑ ॥





श्रीहरिवंश गिरा-जस गाये । श्रीहरिवंश रहत सचु पाये ॥
 श्रीहरिवंश नाम परसंगा । श्रीहरिवंश-गान इक संगा ॥
 मन-क्रम-वचन कहौं नित टेरे । श्रीहरिवंश प्राण-धन मेरे ॥
 सेवक श्रीहरिवंशहि गावै । श्रीहरिवंश नाम रति पावै ॥

॥८ ॥



©my stock photo



जयति जगदीश-जस जगमगत जगत-गुरु,

जगत-वन्दित सु हरिवंश-बानी ।

मधुर, कोमल सुपद, प्रीति आनन्द रस,

प्रेम विस्तरत हरिवंश-बानी ॥



almy stock phot

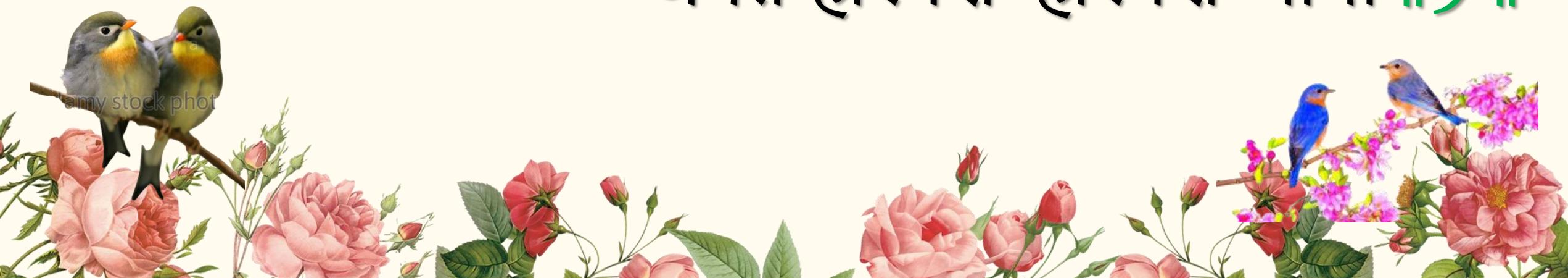


रसिक रस-मत श्रुति सुनत पीवन्त रस,

रसनि गावन्त हरिवंश-बानी ।

कहत हरिवंश-हरिवंश-हरिवंश हित,

जपत हरिवंश-हरिवंश-बानी ॥१९॥



almy stock phot

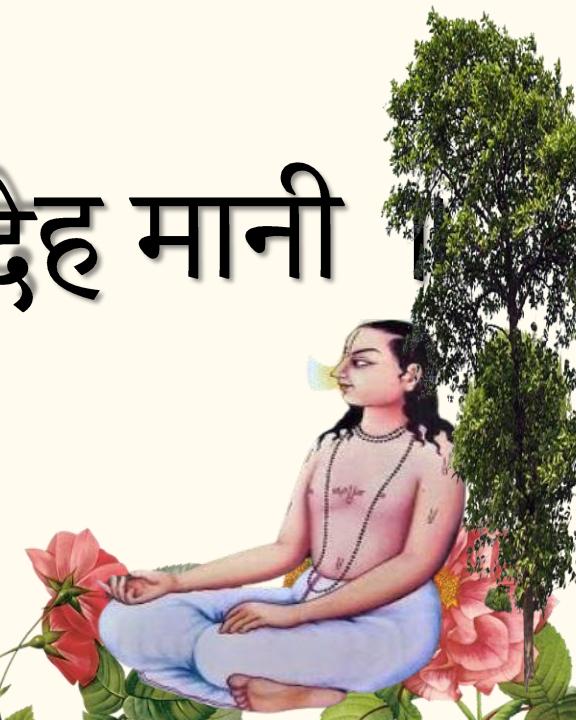


कही नित केलि रस खेल वृन्दाविपि,

कुंज तें कुंज डोलनि बखानी ।

पट न परसंत निकसंत वीथिनु सघन,

प्रेम विह्वल सु नहि देह मानी ।





मग्न जित-तित चलत, छिन सु डगमग मिलत,
पंथ वन देत अति हेत जानी ।
रसिक हित परम आनन्द अवलोकि तन,
सरस विस्तरत हरिवंश-बानी ॥10॥





वंश रस-नाद मोहित सकल सुन्दरी,
आनि रति मानि कुल छाँडि कानी ।
बाहु परिरम्भ नीवी उरज परसि हँसि,
उमँगि रतिपति रमित रीति जानी ॥



almy stock phot



जूथ जुवतिनु खचित, रासमंडल रचित,

गान गुन निर्त आनन्द दानी ।

तत्थ थेई-थेई करत, गतिव नौतन धरत,

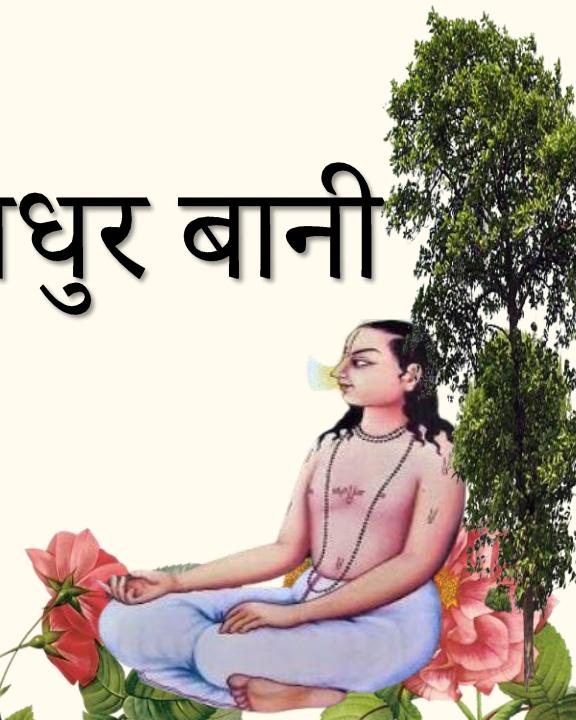
रास रस रचित हरिवंश बानी ॥11॥





रास-रस-रचित बाणी सु प्रगटि॒ जगत्,
शुद्ध अविरुद्ध परसिद्ध जानी ।

श्याम-श्यामा प्रगट, प्रगट अक्षर निकट्,
प्रगट रस श्रवत्, अति मधुर बानी





सो जु बानी रसिक, नित्य निशि-दिन रटत,
कहत अरु सुनत, रस-रीति जानी ।
ताहि तजि और गाऊँ न कबहूँ कछूँ,
प्राण रमि रही हरिवंश-बानी ॥12॥





भाग-अनभाग जानत जु नहि आपनौ,
कौन-धौं लाभ अरु कौन हानी ।

प्रगट-निधि छाँड़ि कत फिरत रुँका करत,
भरम भटकत सु नहि भूलि जानी ॥





प्रीति बिनु रीति रुखी जु लागति सकल,
जुगति करि होत कत कवित-मानी ।

रसिक जो सद्य चाहत जु रसरीति फल,
तौ कहौ अरु सुनौ हरिवंश-बानी ॥13॥



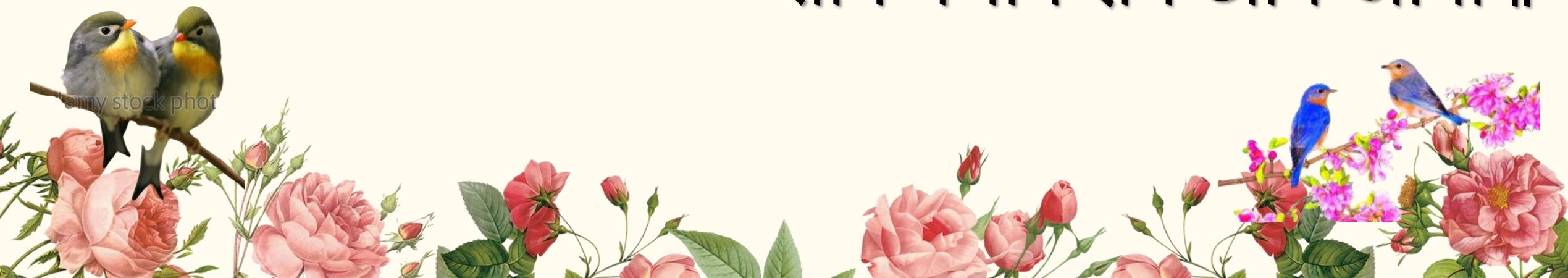


यहै नित-केलि, येर्ई जु नाइक निपुन,

यहै वन भूमि नित-नित बखानी ।

बहुत रचना करत, राग-रागिनि धरत,

तान बंधान सब ठाँनि आनी ॥





ज्यौं मूँद नहि॑ मिलत टकसार तैं बाहिरी,
लाख मे॑ं गैर मुहरी जु जानी ।
यौं जु रस-रीति बरनत न ठौई॑ मिलत
जो न उच्चरत हरिवंश - बानी ॥14॥



amy stock phot



रसिक बिनु कहे सब ही जु मानत बुरौ,

रसिकई कहौ कैसे जु जानी ।

आपनी- आपनी ठौर जेई तहाँ,

आपनी बुद्धि के होत मानी ॥





निपट करि रसिक जो होहु तैसी कहौ,

अब जु यह सुनौं मेरी कहानी ।

जोरु तुम रसिक रस-रीति के चाड़िले,

तौरु मन देहु हरिवंश-बानी ॥15॥



almy stock phot

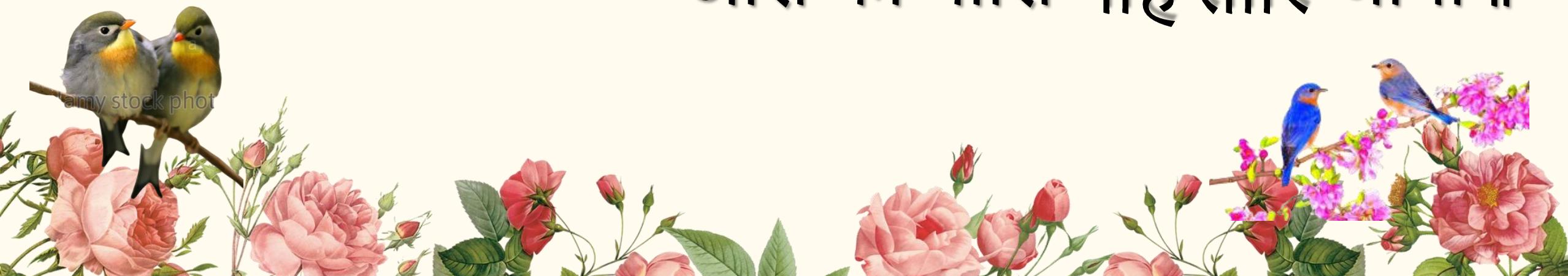


वेद-विद्या पढ़त कर्म-धर्मन करत,

जलपि तन-कलप की अवधि आनी ।

चारु गति छाँड़ि संसार भटकत भ्रमत,

आस की पासि नहि तोरि जानी ॥



almy stock phot



सकल स्वारथ करत रहत जन्मत-मरत,

दुःख अरु सुकर्ख के होत मानी ।

छाँडि जंजार कैसे न निश्चय धरत,

एक किन रमत हरिवंश-बानी ॥16॥





वृथा बलगन करत धौस खोवत सकल,

सोवतन रात नहि जात जानी ।

ऐसेई भाँति समुझ्यौ न कष्टहूँ कछूँ,

कौन सुख-दुःख को लाभ-हानी ॥





तब सुक्ख हरिवंश-गुन नाम रसना रटत,
और बहु वचन अति दुःख-दानी ।
हानि हरिवंश के नाम अन्तर परे,
लाभ हरिवंश उच्चरत बानी ॥17॥

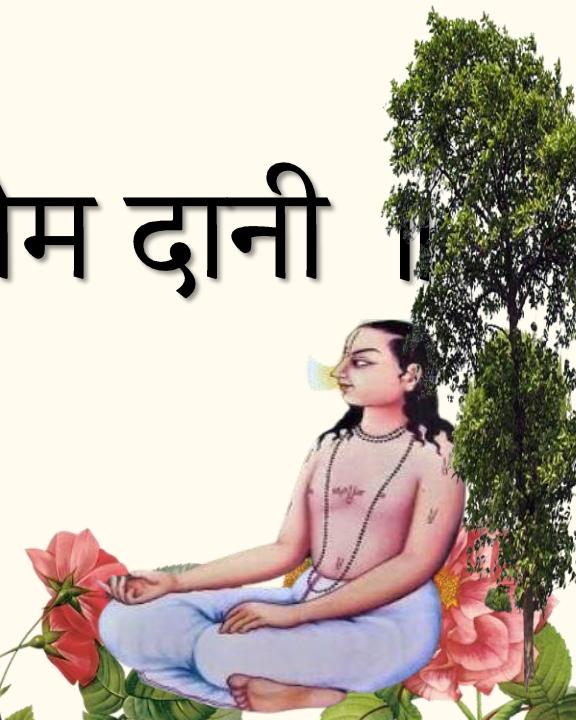


almy stock phot



नाम बानी निकट श्याम श्यामा प्रगट,
रहत निशि-दिन परम प्रीति जानी ।

नाम-बानी सुनत श्याम श्यामा सुबस,
रसद माधुर्य अति प्रेम दानी ॥





नाम-बानी जहाँ श्याम-श्यामा तहाँ,
सुनत गावंत मो मन जु मानी ।
बलित शुभ नाम बलि विशद् कीरति जगत्,
हैं जु बलि जाउँ हरिवंश-बानी ॥18॥



almy stock phot



बलि-बलि श्रीहरिवंश नाम बलि-बलित विमल जस ।
 बलि-बलि श्रीहरिवंश कर्म-व्रत कृत सु नाम बस ॥
 बलि-बलि श्रीहरिवंश बरन-धर्मन गति जानत ।
 बलि-बलि श्रीहरिवंश नाम कलि प्रगट प्रमानत ॥



हरिवंश नाम सु प्रताप बलि, बलित जगत कीरति विशद ।
हरिवंश विमल बानी सु बलि, मृदु कमनीय सु मधुर पद ॥19



! जै जै श्री हित वाणी- प्रताप चतुर्थ प्रकरण की जै जै श्रीहित हरिवंश !



5 . श्रीहित इष्टाराधन प्रकरण





प्रथम प्रणम्य सुरम्य मति, मन-बुधि-चित्त प्रसंश ।

चरण शरण सेवक सदा, सु जय जय श्रीहरिवंश ॥

श्रीहरिवंश विपुल गुण मिष्ट । श्रीहरिवंश उपासक इष्ट ॥

श्रीहरिवंश कृपा मति पाऊँ । श्रीहरिवंश विमल गुण गाऊँ ॥





गाऊँ हरिवंश नाम जस निर्मल, श्रीहरिवंश रमित प्रानं ।
 कारज हरिवंश प्रताप सु उद्घित, कारन श्रीहरिवंश भनं ॥
 विद्या हरिवंश मंल चतुरक्षर, जपत सिद्ध भव-उद्धरनं ।
 जै-जै हरिवंश जगत-मंगल-पर, श्रीहरिवंश-चरन-शरणं ॥1





हरिरिति अक्षर बीज ऋषि, वंशी शक्ति सु अंश ।

नख - शिख सुन्दर ध्यान धरि, सु जै-जै श्रीहरिवंश ॥

श्रीहरिवंश सु सुन्दर ध्यानं । श्रीहरिवंश विशद् विज्ञानं ॥

श्रीहरिवंश नाम गुन श्रूपं । श्रीहरिवंश प्रेम रस रूपं ॥





रसमय हरिवंश परम-परमाक्षर, श्रीहरिवंश कृपा-सदनं ।
 आत्मा हरिवंश प्रगट परमानन्द, श्रीहरिवंश प्रमाण मनं ॥
 जीवन हरिवंश विपुल सुख-सम्पति, श्रीहरिवंश वलित वरणं ।
 जै-जै हरिवंश जगत-मंगल पर, श्रीहरिवंश-चरन-शरणं ॥2





शरन निरापक पद रमित, सकल अशुभ-शुभ नंश ।

देत सहज निश्चल भगति, सु जै-जै श्रीहरिवंश ॥

श्रीहरिवंश मुदित मन लोभं । श्रीहरिवंश वचन वर शोभं ॥

श्रीहरिवंश काय-कृत कारं । श्रीहरिवंश लिशुद्ध विचारं ॥





पूजा हरिवंश नम परमारथ, श्रीहरिवंश विवेक परं ।
धीरज हरिवंश विरद् बल-वीरज, श्रीहरिवंश अभद्र हरं ॥
तृष्णा हरिवंश सुजस रस-लम्पट, श्रीहरिवंश कर्म करणं ।
जै-जै हरिवंश जगत-मंगल पर, श्रीहरिवंश-चरण शरणं ॥३





श्रीहरिवंश सुगोत-कुल, देव जाति हरिवंश ।

श्रीहरिवंश स्वरूप हित, रिद्धि-सिद्धि हरिवंश ॥

श्रीहरिवंश विदित विधि-वेदं । श्रीहरिवंश जु तत्व अभेदं ॥

श्रीहरिवंश प्रकाशित जोगं । श्रीहरिवंश सुकृत सुख भोगं ॥





प्रज्ञा हरिवंश प्रतीति प्रमानत, प्रीतम् श्रीहरिवंश प्रियं ।
 गाथा हरिवंश गीत गुण गोचर, गुपत गुनत हरिवंश-गियं ॥
 सेवक हरिवंश-सार संचित सब, श्रीहरिवंश-धर्म धरनं ।
 जै-जै हरिवंश जगत मंगल पर, श्रीहरिवंश चरण शरणं ॥4





जै जै श्रीहरिवंशचन्द्र, द्विजवर कुल-मण्डन ।
 जै जै श्रीहरिवंशचन्द्र, कलि-तम भव खंडन ॥
 जै जै श्रीहरिवंशचन्द्र, अकलंक प्रकाशित ।
 जै जै श्रीहरिवंशचन्द्र, सब जग आभासित ॥



हरिवंशचंद्र अमृत बरषि, सकल-जन्तु तापन हरणं ।
सेवक समीप संतत रहे सु, श्रीहरिवंश चरण शरणं ॥5 ॥

* जै-जै श्रीहित इष्टाराधन पंचम प्रकरण की जै-जै श्रीहित हरिवंश *



6. श्रीहित- धर्मीन- कृत प्रकरण





पहिलै हरिवंश सु नाम कहौं । हरिवंश सु धर्मिन संग लहौं ॥
 हरिवंश सु नाम सदा तिनके । सुख सम्पति दम्पति जू जिनके ॥
 हरिवंश सु नाम कहौं नित के । मिल ही कहौं कृत्य सु धर्मिन के ॥
 हरिवंश उपासन हैं तिनके । सुख सम्पति दम्पति जू जिनके ॥





3.

हरिवंश गिरा रस-रीति कहैं । सुकृती जन संगति नित्य रहैं ।
 कछु धर्म विरुद्ध नहीं तिनके । सुख सम्पति दम्पति जू जिनके ॥
 हरिवंश प्रसंशत नित्य रहैं । रस-रीति विवर्धित कृत्य कहैं ।
 जु कछु कुल-कर्म नहीं तिनके । सुख सम्पति दम्पति जू जिनके ॥ ॥



amy stock photo





5.

हरिवंश सुनाम जु नित्य रटैं। छिन जाम समान न नैंकु घटैं॥
 विधि और निषेध नहीं तिनकैं। सुख सम्पति दम्पति जू जिनकैं
 हरिवंश सुधर्म जु नित्य करैं। हरिवंश कही सु नहीं बिसरें॥
 हरिवंश सदा निधि हैं तिनकैं। सुख सम्पति दम्पति जू जिनकैं





7.

हरिवंश प्रतापहि जानत हैं । हरिवंश प्रबोध प्रमानत हैं ।
 हरिवंश सु सर्वस हैं तिनके । सुख सम्पति दम्पति जू जिनके ॥
 हरिवंश विचार परे जु रहें । हरिवंश धरम्म धुरा निबहें ॥
 हरिवंश निबाहक हैं तिनके । सुख सम्पति दम्पति जू जिनके ॥





9.

हरिवंश रसायन पीवतु हैं । हरिवंश कहे सुख जीवत हैं ।
 हरिवंश पतिव्रत हैं तिनके । सुख सम्पति दम्पति जू जिनके ॥
 हरिवंश-गिरा रस-रीति भनें । हरिवंश कहैं हरिवंश सुनैं ।
 हरिवंश हृदय व्रत हैं तिनके । सुख सम्पति दम्पति जू जिनके ॥



amy stock photo





11.

हरिवंश-कृपा हरिवंश कहैं। हरिवंश कहैं, हरिवंश लहैं॥
 हरिवंश सुलाभ सदा तिनकैं। सुख सम्पति दम्पति जू जिनकैं
 हरिवंश परायन प्रेम भरे। हरिवंश सु मंल जपैं सुधरे॥
 हरिवंश सु ध्यान सदा तिनकैं। सुख सम्पति दम्पति जू जिनकैं





13.

नित श्रीहरिवंश सु नाम कहैं। नित राधिका-श्याम प्रसन्न रहैं।
 नित साधन और नहीं तिनके। सुख सम्पति दम्पति जू जिनके
 जब राधिका-श्याम प्रसन्न भये। तब नित्य समीप सु खैंचि लये
 हरिवंश समीप सदा तिनके। सुख सम्पति दम्पति जू जिनके॥





15.

नित-नित श्रीहरिवंश नाम, छिन-छिन जु रटत नर।
 नित-नित रहत प्रसन्न, जहाँ दम्पति किशोर वर॥
 जहाँ हरि तहाँ हरिवंश जहाँ हरिवंश तहाँ हरि।
 एक शब्द हरिवंश नाम राख्यौ समीप करि॥





हरिवंश नाम सु प्रसन्न हरि, हरि प्रसन्न हरिवंश रति ।
हरिवंश चरण सेवक जिते, सुनहु रसिक रस-रीति गति ॥

* जै जै श्रीहित धर्मान-कृत षष्ठम प्रकरण की जै जै श्रीहित हरिवंश *



7. श्रीहित रस-रीति प्रकरण





व्यास नन्दन जगत-आधार ।

जगमगत जगजस, सब जग वन्दनीय, जगभय विहंडन ।

जग शोभा, जग-सम्पदा, जग-जीवन, सबजग-मंडन ॥

जग-मंगल, जग-उद्धरन, जग-निधि, जगत-प्रसंश ।

चरण-शरण सेवक सदा, सु जै जै श्रीहरिवंश ॥१॥





जयति जमुना विमल-वर-वारि ।
 शीतल तरल तरंगिनी, रत्न-बद्ध विवि तट विराजत ।
 प्रफुलित विविध सरोजगान, चक्रवादि कल हंस राजत ॥
 कूल विशद्, वनद्धम सधन, लता-भवन अतिरम्य ।
 नित्य-केलि हरिवंश हित, सु ब्रह्मादिकनि अगम्य ॥2॥





सुधर सुन्दर सुमति सर्वज्ञ ।

संतत सहज सदा सदन, सधन-कुंज सुख-पुंज बरसत ।
 सौरभ सरस सुमन चैन, सज्जित सैन सचु रंग हरषत ॥
 केलि विशद आनन्द रसद, बेलि बढ़त नित याम ।
 ठेलि निगम-मग पग सुभग, खेलि कुँवर-कर वाम ॥३॥





रसिक रमनी रसद् रस-रासि ।

रस-सींवा, रस-सागरी, रस निकुंज रसपुंज बरषत ।

रसनिधि सुविधि रसज्ज, रस रेख रीति-रस प्रीति हरषत ॥

रस मूरति, सूरति सरस, रस विलसन रस-रंग ।

रस-प्रवाह सरिता सरस, रति-रस लहर तरंग ॥4॥





श्यामसुन्दर उरसि वनमाल ।

उरगभोग भुजदण्ड वर, कम्बुकंठ मणि-गन विराजत ।
 कुंचितकच मुख तामरस, मधु-लम्पट जनु मधुप राजत ॥
 शीश मुकट, कुँडल श्रवन, मुरली अधर लिखंग ।
 कनक-कपिस पट सोभियति, जनु घन-दामिनि संग ॥५॥





सुभग सुन्दरी, सहज सिंगार ।

सहज शोभा सर्वांग प्रति, सहज रूप वृषभानु नंदिनी ।

सहजानन्द कदम्बिनी, सहज विपिन उर उदित चन्दिनी ॥

सहज केलि नित-नित नवल, सहज रंग सुख चैन ।

सहज माधुरी अंग प्रति, सु मोपै कहत बनै न ॥6॥





विपिन निर्तत रसिक रस-रासि ।

दम्पति अति आनन्द बस, प्रेम मत निशशंक क्रीड़त ।
 चंचल कुण्डल कर चरण, नैन लोल रति रंग ब्रीड़त ॥
 झटकत पट, चुटकिन चटक, लटकत लट, मृदु हास ।
 पटकत पद, उघटत शब्द, मटकत भृकुटि-विलास ॥७ ॥





नवल नागरी नवल युवराज ।

नव-नव वन घन क्रीड़त, नव निकुंज विलसंत सर्वस ।

नव-नव रति नित-नित बढ़त, नयौ नेह नव रंग नयौ रस ॥

नव विलास कल हास नव, सरस मधुर मृदु बैन ।

नव किशोर हरिवंश हित, सु नवल-नवल सुख चैन ॥८॥





नवल-नवल सुख चैन, ऐन आपने आपु बस।
निगम लोक मर्याद, भंजि क्रीड़त रंग रस॥

सुरत-प्रसंग निशंक करत, जोइ-जोइ भावत मन।
ललित अंग चलि भंगि-भाइ लज्जित सु कोक गन॥





अद्भुत बिहार हरिवंश हित, निरखि दासि सेवक जियत ।
विस्तरत, सुनत, गावत रसिक, सु नित-नित लीला-रस पियत ॥

॥१९॥

* जै जै श्रीहित रस-रीति सप्तम प्रकरण की जै जै श्रीहित हरिवंश*



8. श्रीहित अनन्य टेक प्रकरण





कर्म-धर्म कोउ करहु वेद-विधि,

कोउ बहुविधि देवतन उपासी ।

कोउ तीरथ तप ज्ञान ध्यान व्रत,

अरु कोउ निर्गुण ब्रह्म उपासी ॥

कोउ यम-नेम करत अपनी रुचि,

कोउ अवतार-कदम्ब उपासी ।

मन-क्रम-वचन लिशुद्ध सकल मत,

हम श्रीहित हरिवंश उपासी ॥





जाति पाँति कुल-कर्म-धर्म व्रत, संसृति-हेतु अविद्या नासी ।
 सेवक-रीति प्रतीति प्रीति हित, विधि-निषेध श्रङ्खला विनासी ॥
 अब जोई कही करैं हम सोई, आयसु लिये चलैं निज दासी ।
 मन-क्रम-वचन लिशुद्ध सकल मत, हम श्रीहित हरिवंश उपासी ॥





जो हरिवंश कौ नाम सुनावै, तन-मन-प्राण तासु बलिहारी ।
 जो हरिवंश - उपासक सेवै, सदा सेउँ ताके चरण विचारी ॥
 जो हरिवंश-गिरा जस गावै, सर्वसु दैँहुँ तासु पर वारी ।
 जो हरिवंश कौ धर्म सिखावै, सोई तौ मेरे प्रभु तें प्रभु भारी ॥





श्रीहरिवंश सु नाद विमोहीं, सुनि धुनि नित्य तहाँ मन दैहों ।
 श्रीहरिवंश सुनन्त चलीं सँग, हैं तिन संग नित्य प्रति जैहों ॥
 श्रीहरिवंश विलास रास-रस, श्रीहरिवंश संग अनुभैहों ।
 जो हरि नाम जगलि शिरोमणि, ‘वंश’ बिना कबहुँ नहीं लैहों ॥





प्रेमी अनन्य भजन्न न होइ, जो अन्तरयामी भजै मन में।
 जो भजि देख्यौ यशोदा कौ नंदन, विश्व दिखाई सबै तन में॥
 श्रीहरिवंश सु नाद विमोहीं ते, शुद्ध समीप मिलीं छिन में।
 अब यामें मिलौनी मिलै न कछू, जब खेलत रास सदा वन में॥





जो बहु मान करै कोउ मेरौ, कियें बहु मानत नाहि बडाई ।
 जो अपमान करै कोउ कैहूँ, किये अपमान नहीं लघुताई ॥
 श्रीहरिवंश-गिरा रस सागर, माँझ मगन्न सबै निधि पाई ।
 जो हरिवंश तजौं, भजौं औरहि, तौ मोहि श्रीहरिवंश दुहाई ॥





कही वन-केलि निकुंज-निकुंजन, नव दल नूतन सेज रचाई ।
 नाथ विरम्मि -विरम्मि कही तब, सो रति तैसी धौं कैसे भुलाई ।
 ‘सत्वर उठे महामधु पीवत’, माधुरी बानी मेरे मन भाई ।
 जो हरिवंश तजौं, भजौं औरहि, तौ मोहि श्रीहरिवंश दुहाई ॥





भुज अंसन दीने विलोकि रहे, मुख-चंद्र उभय मधु पान कराई ।
 आपु विलोकि हृदय कियौ मान, चिवुक्ष सुचारु प्रलोइ मनाई ।
 श्रीहरिवंश बिना यह हेत, को जानै कहा, को कहै समुझाई ।
 जो हरिवंश तजौं, भजौं औरहि, तौ मोहि श्रीहरिवंश दुहाई ॥



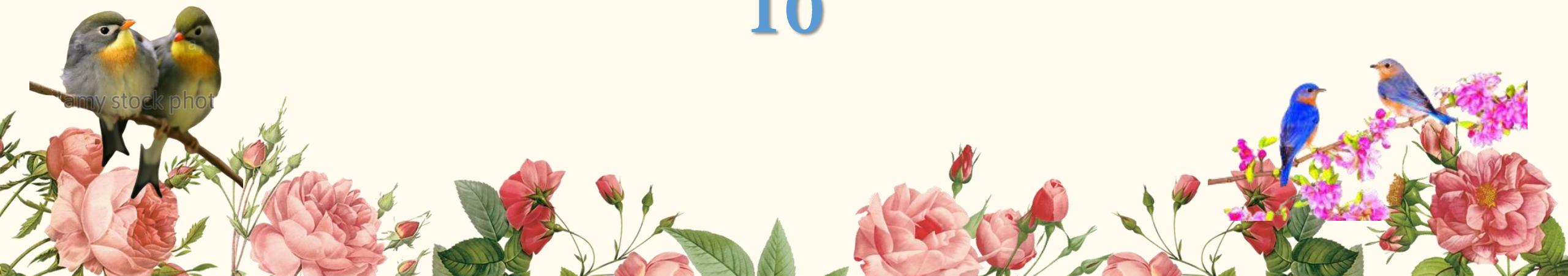


श्रीहरिवंश सुनाद, सुरीति, सुगान मिलै वन-माधुरी गाई।
 श्रीहरिवंश बचन्न-रचन्न, सु नित्य किशोर-किशोरी लड़ाई॥
 श्रीहरिवंश-गिरा रस-रीति, सु चित्त प्रतीति न आन सुहाई।
 जो हरिवंश तजौं, भजौं औरहि, तौ मोहि श्रीहरिवंश दुहाई





श्रीहरिवंश कौ नाम सु सर्वसु, जानि सु राख्यौ मैं चित्त समाई ।
 श्रीहरिवंश के नाम-प्रताप कौ, लाभ लह्यौ सु कह्यौ नहि जाई ॥
 श्रीहरिवंश कृपा तें लिशुद्ध कै, साँची यहै जु मेरें मन भाई ।
 जो हरिवंश तजौं, भजौं औरहि, तौ मोहि श्रीहरिवंश दुहाई ॥





देखे जु मैं अवतार सबै भजि, तहाँ-तहाँ मन तैसौ न जाई ।
 गोकुलनाथ महा ब्रज-वैभव, लीला अनेक न चित्त खटाई
 एकहि रीति-प्रतीति बँध्यौ मन, मोहि सबै हरिवंश बजाई ।
 जो हरिवंश तजौं, भजौं औरहि, तौ मोहि श्रीहरिवंश दुहाई





नाम अरद्ध हरै अघ-पुंज, जगत् करै हरि नाम बड़ाई।
 सो हरिवंश समेत संपूरण, प्रेमी अनन्यनि कौं सुखदाई॥
 श्रीहरिवंश कहंत-सुनंत छिन-छिन काल वृथा नहि जाई।
 जो हरिवंश तजौं, भजौं औरहि, तौ मोहि श्रीहरिवंश दुहाई॥

12


alamy stock photo



श्रीहरिवंश सुप्राण, सु मन हरिवंश गनिज्जै ।
 श्रीहरिवंश सुचित्त, मित्त हरिवंश भनिज्जै ॥
 श्रीहरिवंश सुबुद्धि बरन हरिवंश नाम जस ।
 श्रीहरिवंश प्रकाश वचन हरिवंश गिरा रस ॥





हरिवंश नाम बिसरै न छिन, श्रीहरिवंश सहाय भल ॥
हरिवंश चरण सेवक सदा, सु शपथ करी हरिवंश बल ॥13॥

! जै जै श्रीहित अनन्य टेक अष्टम प्रकरण की जै जै श्रीहित हरिवंश !





9. श्रीहित अकृपा-कृपा प्रकरण





श्रीहित अकृपा-कृपा प्रकरण (10)

अकृपा-सोरठ

सब जग देख्यौ चाहि, काहि कहौं हरि-भक्ति बिनु।
प्रीति कहूँ नहीं आहि, श्रीहरिवंश-कृपा बिना ॥1 ॥
गुप्त प्रीति कौ भंग, संग प्रचुर अति देखियत।
नाहिन उपजत रंग, श्रीहरिवंश-कृपा बिना ॥2 ॥





मुख बरनत रस-रीति, प्रीति चित्त नहि आवही ।
 चाहत सब जग कीर्ति, श्रीहरिवंश-कृपा बिना ॥3 ॥

गावत गीत रसाल, भाल तिलक शोभित घना ।
 बिनु प्रीतिहि बेहाल, श्रीहरिवंश-कृपा बिना ॥4 ॥

नाचत अतिहि रसाल, ताल न शोभित प्रीति बिनु ।
 जनु बींधे जंजाल, श्रीहरिवंश-कृपा बिना ॥5 ॥





9. श्रीहित कृपा-अकृपा प्रकरण (10)

मानत अपनौं भाग, राग करत अनुराग बिनु ।
दीखत सकल अभाग, श्रीहरिवंश-कृपा बिना ॥6॥
पढ़त जु वेद-पुरान, दान न शोभित प्रीति बिनु ।
बींधे अति अभिमान, श्रीहरिवंश-कृपा बिना ॥7॥
दर्शन भक्त अनूप, रूप न शोभित प्रीति बिनु ।
भरम भटक्कत भूप, श्रीहरिवंश-कृपा बिना ॥8॥



9. श्रीहित कृपा-अकृपा प्रकरण (10)



सुन्दर परम प्रवीन, लीन न शोभित प्रीति बिनु।
ते सब दीखत दीन, श्रीहरिवंश-कृपा बिना ॥9॥

गुन मानी संसार, और सकल गुन प्रीति बिनु।
बहुत धरत सिर भार, श्रीहरिवंश-कृपा बिना ॥10॥





कृपा सोरठा- 9. श्रीहित कृपा-अकृपा प्रकरण (11)

मुख बरनत हरिवंश, चित्त नाम हरिवंश-रति ।
मन सुमिरन हरिवंश, यह जु कृपा हरिवंश की ॥1॥

सब जीवन सौं प्रीति, रीति निवाहत आपनी ।
श्रवण-कथन परतीति, यह जु कृपा हरिवंश की ॥2॥

शत्रु-मिल सम जानि, मानि मान-अपमान सम ।
दुर्ख-सुख लाभ न हानि, यह जु कृपा हरिवंश की ॥3॥





नित इक धर्मिनु संग, रंग बढत नित-नित सरस।
 नित-नित प्रेम अभंग, यह जु कृपा हरिवंश की ॥4॥

निरखत नित्यबिहार, पुलकित तन रोमावली।
 आनन्द नैन सुढार, यह जु कृपा हरिवंश की ॥5॥

छिन-छिन रुदन करन्त, छिन गावत आनंद भरि।
 छिन-छिन हहर हसन्त, यह जु कृपा हरिवंश की ॥6॥





छिन-छिन बिहरत संग, छिन छिन निरखत प्रेम भरि।
 छिन जस कहत अभंग, यह जु कृपा हरिवंश की ॥७ ॥

निरखत नित्य किशोर, नित्य-नित्य नव-नव सुरति।
 नित निरखत छबि भोर, यह जु कृपा हरिवंश की ॥८ ॥

तृपित न मानत नैन, कुंज रन्ध्र अवलोकि तन।
 यह सुख कहत बनै न, यह जु कृपा हरिवंश की ॥९ ॥





कहा कहौं बड़ भाग, नित-नित रति हरिवंश हित ।
 नित वद्धत अनुराग, यह जु कृपा हरिवंश की ॥10॥
 नित वद्धित अनुराग, भाग अपनौ करि मानत ।
 नित्य-नित्य नव केलि, निरखि नैननि सचु मानत ॥





नित-नित श्रीहरिवंश नाम, नव-नव रति मानत ।
 नित-नित श्रीहरिवंश कहत, सोइ-सोइ सिर मानत ॥
 आपुनौं भाग आपुन प्रगट, कहत जु श्रीहरिवंश-बल ।
 हरिवंश भरोसे भये निडर ,सु नित गरजत हरिवंश बल ॥11

॥जै-जै श्रीहित कृपा-अकृपा नवम प्रकरण की जै जै श्रीहित हरिवंश ॥



10-श्रीहित भक्त भजन प्रकरण





श्रीहरिवंश सु धर्म हृढ़, अरु समुद्दत्त निजु रीति ।
 तिनकौ हैं सेवक सदा, मन-क्रम-वचन प्रतीति ॥
 मन-क्रम-वचन प्रतीति प्रीति दिन चरण परखारै ।
 नित प्रति जूठन खाउँ करन भेदहि न विचारै ।
 तिनकी संगति रहत जाति-कुल-मद सब नंशहि ॥
 संतत सेवक सदा भजत जे श्रीहरिवंशहि ॥१॥



सब अनन्य साँचे सुविधि, सबकौ हैं निजु दास।
 सुमिरन नाम पविल अति, दरस-परस अघ नास॥
 दरस-परस अघ नास बास निज संग करौं दिन।
 तिन मुख हरि-जस सुनत श्रवण मानौं न तृपित छिन॥
 कलि अभद्र बरनत सहस, कलि कामादिक द्वन्द तब।
सेवक शरण सदा रहै, सुविधि साँचे अनन्य सब ॥२॥



श्रीराधाबल्लभ भजत भजि, भली भली सब होय ।
 रसिक अनन्य सजाति भजि, भली भली सब होय ॥
 भली-भली तब होइ जबहि हरिवंश-चरण-रति ।
 भली-भली तब होइ रचित रस-रीति सदा मति ॥
 भली-भली सब होइ भक्ति गुरु-रीति अगाधा ।
 भली-भली सब होइ भजत भजि श्रीहरि राधा ॥३॥





श्रीराधावल्लभ भजत भजि, भली-भली सब होइ ।
अशुभ अनर्भल संग जन, बिमुख तजौ सब कोई ॥
बिमुख तजौ सब कोइ झूठ बोलत सचु मानत ।
दोष करत निरशंक रंक करि संतन जानत ॥
अभिमानी गर्विष्ठ लोभ मद-मत्त अगाध ।
दुष्ट परिहरौ दूर भजत भजि श्रीहरि - राधा ॥4॥



श्रीराधावल्लभ भजत भजि, भली-भली सब होइ ।
 जिते विनायक शुभ-अशुभ, विघ्न करें नहि कोइ ॥
 विघ्न करें नहि कोई डरें कलि काल कष्ट भय ।
 हरें सकल संताप हरषि हरि नाम जपत जय ॥
 श्रीवृन्दावन नित्य केलि कल करत अगाधा ।
 हित हरिंश किशोर भजत भजि श्रीहरि - राधा ॥५ ॥



श्रीराधाबल्लभ भजत भजि, भली-भली सब होइ ।
 लिविधि ताप नासहि सकल, सब सुख-सम्पति होइ ॥
 सब सुख-सम्पति होइ होइ हरिवंश चरण रति ।
 होइ विषय-विष नास होइ वृन्दावन बस गति ॥
 होइ सुदृढ़ सत्संग होइ रस-रीति अगाधा ।
 होइ सुजस जग प्रगट होइ पद प्रीति सु राधा ॥6॥



श्रीराधाबल्लभ भजत भजि, भली भली सब होइ ।
 भीर मिटै भट यमन की, भय-भंजन हरि सोइ ॥
 भय-भंजन हरि सोइ भरम भूल्यौ भटकत कत ।
 भगवत्-भक्ति विचार वेद भागवत् प्रीति रति ॥
 भक्त-चरण धरि भाव तरत, भव-सिन्धु अगाधा ।
 हित हरिवंश प्रसंश भजत भजि श्रीहरि-राधा ॥७ ॥



श्रीराधाबल्लभ भजत भजि, भली-भली सब होइ ।
 अन्य देव सेवी सकल, चलत पुँजी सी खोइ ॥
 चलत पुँजी सी खोइ, रोइ-झाखि घौस गँवावत ।
 सोइ छपत सब रेन, जोइ कपि-सम जु नँचावत ॥
 भोइ विषम विष-विषय कोइ सतगुरु नहि लाधा ।
 धोइ सकल कलि-कलुष दोइ भजि श्रीहरि-राधा ॥8॥



राधाबल्लभलाल बिनु, जीवन-जनम अकथि ।
 बाधा सब कुल कर्म-कृत, तुच्छ न लागै हत्थ ॥
 तुच्छ न लागै हत्थ सत्थ समरथ न बियौ तब ।
 माथ धुनत हरि-विमुख संग यम-पंथ चलत जब ॥
 गाथ-विमल गुन गान कथि जस श्रवन आगाधा ।
 नाथ अनाथन हित समर्थ मोहन - श्रीराधा ॥९ ॥



कर्मठ कठिन ससल्य नित, सोचत शीश धुनंत।
 श्रीहरिवंश जु उद्धरी, सोइ रस-रीति सुनंत।
 सोइ रस-रीति सुनंत अन्त अनसहन करत सब।
 जब-जब जियनि विचारि सार मानत मन-मन तब॥
 छिन-छिन लोलुप चित्त समुद्दिष्ट छाँड़त तातें शठ।
 करत न संत समाज जिते अभिमानी कर्मठ ॥10॥



हित हरिवंश प्रसंश मन, नित सेवन विश्राम।
 चित निषेध-विधि सुधि नहीं, बितु संचित निधि नाम॥
 बितु संचित निधि नाम काम सुमिरन दासन्तन।
 जाम-घटी न विलम्ब वाम-कृत करत निकट जन॥
 ग्राम-पंथ-आरण्य दाम दृढ़ प्रेम ग्रथित नित।
 ता मत रत सुखरासि वाम-दृश नव किशोर हित ॥11॥



श्रीराधा आनन कमल, हरि-अलि नित सेवंत ।
 नव-नव रति हरिवंश हित, वृन्दाविपिन बसंत ॥
 वृन्दाविपिन बसंत, परस्पर बाहु दंड धरि ।
 चलत चरन गति मत्त करिनि गजराज गर्व भरि ॥
 कुंज-भवन नित केलि करत नव नवल अगाधा ।
 नना काम प्रसंग करत मिलि हरि - श्रीराधा ॥12॥



मुख विहँसत हरिवंश हित, रुख रस-रासि प्रवीन ।
 सुख सागर नागर गुरु, पुहुप-सैन आसीन ॥
 पहुप-सैन आसीन कीन निजु प्रेम केलि-बस ।
 पीन उरज वर परसि भीन नव-सुरतरंग-रस ॥
 खीन निरखि मद-मदन दीन पावत जु विलखि ढुख ।
 मीनकेतु निर्जित सु लीन प्रिय निरखि विहँसि मुख ॥13॥



रस-सागर हरिवंश हित, लसत सरित-वर तीर।
 जस जग विशद् सुविस्तरत, बसत जु कुंज कुटीर॥
 बसत जु कुंज-कुटीर, भीर नव रँग भामिनी भर।
 चीर नील गौरांग सरस घन तन पीताम्बर।
 धीर बहुत दक्षिन समीर कल-केलि करत अस।
 नीरज-शयन सु रचित वीर वर सुरतरंग रस ॥14॥



पिय विचिल वन हरषि मन, जिय जस बैंनु कुनंत ।
 तिय तरुनी सुनि तुष्ट धुनि, कियौ तहाँ गमन तुरंत ॥
 कियौ तहाँ गमन तुरंत कंत मिलि विलसत सर्वस ।
 तन्त रासमण्डल जुरन्त रस निर्त रंग रस ॥
 संतत सुर दुन्दुभि बजंत बरषंत सुमन लिय ।
 अंत केलि जल जनुकि मत्त इभराट करिनि प्रिय ॥15॥



हरि बिहरत वन जुगल जनु, तड़ित सुवपु धन संग।
 करि किसलय दल सैन भल, भरि अनुराग अभंग॥
 भरि अनुराग अभंग रंग अपने सचु पावत।
 अंग-अंग सजि सुभट जंग मनसिजहि लजावत॥
 पंगु हष्टि ललितादि तंक निरखत रंधन करि।
 मंग आदि रचि शिथिल सजत उच्छंग धरत हरि ॥16॥



श्याम सुभग तन विपिन घन, धाम विचित्र बनाइ।
 ता महि संगम जुगल जन, काम-केलि सचु पाइ॥
 काम-केलि सचु पाइ दाइ छल प्रियहि रिझावत।
 धाइ धरत उर अंक भाइ गन कोक लजावत॥
 चाइ चवग्गुन चतुर राइ रस रति संग्रामहि।
 छाइ सुजस जग प्रगट गाइ गुन जीवत श्यामहि॥17॥



सलिला-तट सुरद्धम् निकट, अलि ता सुमन सुवास ।
 ललितादिक रसननि विवस, चलि ता कुंज निवास ॥
 चलि ता कुंज निवास आस तब हित मग परष्ट ।
 रासस्थल उत्तम विलास सचि मिलि मन हरष्ट ॥
 तासु वचन सुनि चित हुलास विरहज दुख गलिता ।
 दासन्तनि कुल जुवति, मास माधव सुख-सरिता ॥18॥



परखत पुलिन सुलिन गिरा, करषत चित सुर-घोर।
 हरषत हित नित नवल रस, बरषत जुगल किशोर॥
 बरषत जुगल किशोर जोर नवकुंज सुरत-रन।
 मोर चन्द्र चय चलत डोर कच शिथिल सुभग तन॥
 चोर चित्त ललितादि, कोर रंधन निजु निरखत।
 थोर प्रीति अन्तर न भोर, दम्पति छवि परखत॥19॥



ऋतु बसन्त वन फल सुमन, चित प्रसन्न नव कुंज।
 हित दम्पति रति कुशल मति, वितु संचित सुख-पुंज॥
 वितु संचित सुख-पुंज गुंज मधुकर सुनाद धुनि।
 हुंज-मृदुंग-उपंग धुंज डफ झंझ ताल सुनि॥
 मंजु जुवति रस-गान लुंज इव खग तहाँ विथकितु।
 भुंजत रास-विलास कुंज नव सचि बसन्त ऋतु॥20॥



कहत-कहत न कही परै, रहत जु मनहि विचारि।
 सहत-सहत बाढ़े भगति, गृह तन गुरु हित गार॥
 गृह तन गुरु हित गार हार अपनी करि मानत।
 चार वेद सुस्मृति सु चार क्रम-कर्म न जानत॥
 डारि अविद्या करि विचार चित हित हरिवंशहि।
 नारि-रसिक हृद वन विहार, महिमा न परै कहि॥21॥



सेवक श्रीहरिवंश के, जग भ्राजत गुन गाइ ।
 निशि-दिन श्रीहरिवंश हित, हरषि चरण चित लाइ ॥
 हरषि चरण चित लाइ जपत हरिवंश गिरा-जस ।
 मनसि-वचसि चित लाइ जपत हरिवंश नाम-जस ॥
 श्रीहरिवंश प्रताप-नाम नौका निजु खेवक ।
 भव-सागर सुख तरत निकट हरिवंश जु सेवक ॥22 ॥

जै-जै श्रीहित भक्त भजन नाम दसम प्रकरण की जै-जै श्रीहित हरिवंश !



11 - श्रीहित ध्यान प्रकरण





11 - श्रीहित ध्यान प्रकरण (4)



(1)

सजयति हरिवंशचन्द्र नामोच्चार, वद्धित सदा सुखुद्धि ।
रसिक अनन्य प्रधान सतु, साधु मण्डली मंडनो जयति ॥





जय जय श्रीहरिवंश हित, प्रथम प्रणाउँ सिर नाइ।
 परम रसद, निर्विघ्न है, जैसे कवित सिराइ॥
 सुकवित सुछन्द गनिज्जै समय प्रबन्ध-वन।
 सुकवि विचिल भनिज्जै हरिजस लीन मन॥
 श्रोता सोई परम सुजान सुनत चित रति करै।
 सोई सेवक रसिक अनन्य विमल जस विस्तरै॥





सुजस सुनत, बरनत सुख पायौ। कीर-भृंग नारद-शुक गायौ॥
 श्रीवृन्दावन सब सुखदानी। रतन-जटित वर भूमि रमानी॥
 वर भूमि रमानि सुखद द्वूम-बल्ली, प्रफुलित फलित विविध बरनं।
 नित शरद-बसंत मत्त मधुकर कुल, बहु पतलि नादहि करनं॥
 नाना द्वूम-कुंज मंजु वर वीथी, वन-बिहार राधारमणं।
 तहाँ संतत रहत श्याम-श्यामा सँग, श्रीहरिवंश चरण शरणं॥



(2)



रहत सदा सखि संगम् , रास-रंग रस-रसाल उल्लासं ।
लीला ललित रसालं, सम सुर-तालं, वरषत सुख-पुंजं ॥





अतुलित रस वरषत सदा सुख निधान कन वासि ।

अद्भुत महिमा महि प्रगट सुन्दरता की रासि ॥

सुन्दरता की रासि कनक दुति देह-रुचि ।

वारिज-वदन प्रसन्न हासि मृदु रंग शुचि ॥

सुभू सुषु ललाट-पट सुन्दर करण ।

नैन कृपा अविलोकि प्रणत-आरति-हरन ॥





सुन्दर ग्रीव उरसि वनमालं । चारु अंश वर बाहु विशालं ॥
 उदर सुनाभि चारु कटि देशं । चारु जानु शुभ चरण सुवेशं ॥
 शुभ चरण सुवेश मत्त गज कर गति, पर उपकार देह धरनं ।
 निज गुन विस्तार अधार अवनि पर, बानी विशद् सुविस्तरनं ॥
 करुणामय परम पुनीत कृपानिधि, रसिकअनन्य सभाभरनं ।
 जै जग उद्योत व्यास कुल दीपक, श्रीहरिवंश चरण शरणं ॥





(3)

सारासार विवेकी, प्रेम-पुंज अद्भूत अनुराग ।
हरि-जस-रस-मधु-मत्त, सर्व त्यक्त्वा दुस्त्यज कुल कर्म ॥





कर्म छाँडि कर्मठ भजैं, ज्ञानी ज्ञान विहाइ ।
 व्रतधारी व्रत तजि भजैं, श्रवणादिक चित लाइ ॥
 श्रवणादिक चित लाइ, जोग जप तप तजे ।
 औरौ कर्म सकाम, सकल तजि सब भजे ॥
 साधन विविध प्रयास, ते सकल विहावहीं ।
 श्रवन कथन सुमिरन, सेवन चित लावहीं ॥





अर्चन-वंदन अरु दासन्तन । सख्य और आत्मा समर्पन ॥
 ये नव लक्षण भक्ति बढ़ाई । तब तिनि प्रेमलक्षणा पाई ॥
 पाई रस-भक्ति गूढ़ जुग-जुग जग, दुर्लभ भव इन्द्रादि विधि ।
 आगम अरु निगम-पुराण अगोचर, सहज माधुरी रूप निधि ॥
 अनभय आनन्द कन्द निजु सम्पति, गुप्त सुरीति प्रकट करनं ।
 जय जग उद्घोत व्यास कुल-दीपक, श्रीहरिवंश चरण शरणं ॥





(4)

प्रगटित प्रेम प्रकाशं, सकल जंतु शिशरी-कृत चितं ।
गत कलि तिमिर समूहं, निर्मल अकलंक उदित जग चन्द्रं ॥





विशद् चन्द्र तारा-तनय, शीतल किरन प्रकासि ।
 अमृत सींचत मम हृदय, सुखमय आनंद रासि ॥
 सुखमय आनंद रासि सकल जन शोक हर ।
 समुद्धि जे आये शरन ते डरत न काल डर ॥
 दियै दान तिन अभय, द्वंद-दुख सब घटे ।
 नित-नित नव-नव प्रेम, कर्म-बन्धन कटे ॥





कटे कर्म-बन्धन संसारी। सुख-सागर पूरित अति भारी ॥
 विधि-निषेध श्रृंखला छुड़ावै। निज आलय वन आनि बसावै ॥
 आलय वन बसत संग पारस के, आयस कनक समान भयं ।
 माँगौं मन मनसि दासि अपनी करि, पूरण काम सदा हृदयं ॥
 सेवक गुन-नाम आस करि बरनै, अब निजु दासि कृपा करनं ।
 जय जग-उद्घोत व्यासकुल-दीपक, श्रीहरिवंश-चरण शरणं ॥





पढ़त-गुनत गुन-नाम सदा सत संगति पावै।
 अरु बाढ़े रसरीति विमल बानी गुन गावै॥
 प्रेम लक्षणा भक्ति सदा आनन्द हितकारी।
 श्रीराधा जुग चरन प्रीति उपजै अति भारी॥





निजु महल ठहल नव कुंज में नित सेवक सेवा करनं ।
निश दिन समीप संतत रहै सु श्रीहरिवंश चरण शरणं ॥

० जै जै श्रीहित ध्यान एकादश प्रकरण की जय जय श्रीहित हरिवंश ०



12 - श्रीहित मंगल गान प्रकरण



12. श्रीहित मंगल गान प्रकरण (4)



जय जय श्रीहरिवंश, व्यास कुल मण्डना ।
रसिक अनन्यनि मुख्य-गुरु जन-भय खण्डना ॥
श्रीवृन्दावन बास, रास-रस भूमि जहाँ ।
क्रीड़त श्यामा-श्याम, पुलिन मंजुल तहाँ ॥





पुलिन मंजुल परम पावन लिविध तहाँ मारुत बहै ।
 कुंज भवन विचिल शोभा मदन नित सेवत रहै ॥
 तहाँ संतत व्यास नन्दन रहत कलुष विहण्डना ।
 जय जय श्रीहरिवंश, व्यास-कुल-मण्डना ॥१ ॥





जय जय श्रीहरिवंशचन्द्र उद्घित सदा ।
द्विज-कुल-कुमुद प्रकाश, विपुल सुख सम्पदा ॥
पर उपकार विचार, सुमति जग विस्तरी ।
करुणा सिन्धु कृपालु, काल भय सब हरी ॥





हरी सब कलि काल की भय कृपा रूप जु वपु धर्यो ।
 करत जे अनसहन निन्दक तिनहुँ पै अनुग्रह करयौ ॥
 निरभिमान निर्वैर निरूपम निष्कलंक जु सर्वदा ।
 जय जय श्रीहरिवंश चन्द्र उद्धित सदा ॥12॥





जय जय श्रीहरिवंश प्रसंशित सब दुनी ।
 सारासार विवेकित कोविद् बहु गुनी ॥
 गुप्त रीति आचरण प्रगट सब जग दिये ।
 ज्ञान - धर्म - व्रत - कर्म, भक्ति-किकर किये ॥





भक्ति हित जे शरण आये द्वन्द्व-दोष जु सब घटे ।
कमल कर जिन अभय दीने कर्म-बन्धन सब कटे ॥
परम सुखद सुशील सुन्दर, पाहि स्वामिन् मम धनी ।
जय जय श्रीहरिवंश, प्रसंशित सब दुनी ॥३ ॥





जय जय श्रीहरिवंश, नाम गुण गाइ है।
प्रेम लक्षणा भक्ति सुट्ठ करि पाइ है॥
अरु बढ़े रसरीति, प्रीति चित ना टरै।
जीति विषम संसार, कीरति जग विस्तरै॥



विस्तरै सब जग विमल कीरति, साधु-संगति न टरै।
 वास वृन्दाविपिन पावै श्रीराधिका जु कृपा करै॥
 चतुर जुगल किशोर सेवक दिन प्रसादहि पाइ है।
 जय जय श्रीहरिवंश, नाम गुण गाइ है ॥4॥

! जै जै श्रीहित मंगल गान द्वादश प्रकरण की जै जै श्रीहित हरिवंश !



मधुरितु माधव मास सुहाई ।

भाग प्रकाश व्यासनन्दन मुख,

फूल्यौ कमल अमल छबि छाई ॥

श्रवत मधुर मकरन्द सुयश निजु,

कुंज केलि सौरभ सरसाई ।

सेवत रसिक अनन्य भ्रमर मन,

जैश्रीकृष्णदास सुखसार सदाई ॥



13. श्रीहित पाके धर्मी प्रकरण





13. श्रीहित पाके धर्म प्रकरण (11)

1.

साधन विविध सकाम मति, सब स्वारथ सकल सबै जु अनीति ।
ज्ञान-ध्यान-व्रत-कर्म जिते सब, काहू में नहिं मोहि प्रतीति ॥
रसिक अनन्य निशान बजायौ, एक श्याम श्यामा पद-प्रीति ।
श्रीहरिवंश चरन निजु सेवक, बिचलै नहीं छाँडि रसरीति ॥



2.

श्रीहरिवंश-धर्म प्रगटु निपटु, कै ताकी उपमा कौं नाहिन ।
 साधन ताकौ सबै नव-लक्षन, तच्छिन वेगि विचारत जाहि न ॥
 जो रस-रीति सदा अविरुद्ध, प्रसिद्ध-विरुद्ध तजत्त क्यौं ताहि न ।
 जो पै धरम्मी कहावत हौ, तौ धरम्मी-धरम्म समुज्ज्ञत काहि न ॥



3.

जो पै धरम्मिन सौं नहिं प्रीति, प्रतीति प्रमानत आन न आनिबौ।
एकहि रीति सबन्नि सौं हेत, समीति समेत समान न मानिबौ॥
बात सौं बात मिलै न प्रमान, प्रकृति विरुद्ध जुगति कौ ठानिबौ।
श्रीहरिवंश के नाम न प्रेम, धरम्मी-धरम्म समुझ्यौ क्यौं जानिबौ॥



4.

श्रीहरिवंश बचन्न प्रमानि कैं, साकत संग सबै जु बिसारत ।
 संसृति माँझ बर्याइ कैं पायौ जु, मानुष देह वृथा कत डारत ॥
 क्यों न करत धरम्मिन कौ सँग, जानि बूझि कत आन विचारत ।
 जो पै धरम्मी मरम्मी हौ तौ, धरम्मिन सौं कत अंतर पारत ॥



5.

जो धरम्मी-धरम्म कहौ जु करौ, तौ धरम्मिन संग बड़ौ सब तें।
 अपुनर्भव स्वर्ग जु नाहि बराबर, तौ सुख-मर्त्य कहौ कब तें॥
 कहौ काहे प्रमान वचन बिसारत, प्रेमी अनन्य भये जब तें।
 तब श्रीहरिवंश कही जु कृपा करि, साँचौ प्रबोध सुन्यैं अब तें॥

6.

श्रीहरिवंश जु कही श्याम-श्यामा, पद-कमल-संगी सिर नायौ ।
 ते न बचन मानत गुरु-द्रोही, निशि-दिन करत आपनौ भायौ ॥
 इत व्योहार न उत परमारथ, बीच ही बीच जु जनम गँमायौ ।
 जो धर्मिनु सौं प्रीति करत नहिं, कहा भयौ धर्मी जु कहायौ ॥



7.

करौ श्रीहरिवंश उपासक संग जु, प्रीति तरंग सुरंग बह्यौ।
 करौ श्रीहरिवंश की रीति सबै, कुल-लोक-विरुद्ध जु जाइ सह्यौ॥

करौ श्रीहरिवंश के नाम सौं प्रीति, जा नाम-प्रताप धरम्म लह्यो।
 जु धरम्मी-धरम्म स्वरूप लह्यौ, बिसरौ जिन श्रीहरिवंश कह्यो॥



8.

श्रीहरिवंश-धरम्म जे जानत, प्रीति की ग्रंथि नहीं मिलि खोलत।
 श्रीहरिवंश-धरम्मिन माँझ, धरम्मी सुहात धरम्म लै बोलत॥

श्रीहरिवंश धरम्मी कृपा करै, तासु कृपा रस मादक डोलत।
 श्रीहरिवंश की बानी-समुद्र कौ, मीन भयौ जु अगाध कलोलत॥



9.

व्रत संयम कर्म सु धर्म जिते, सब शुद्ध विशुद्ध पिछानत हैं।
 अपनी-अपनी करतूत करें, रस मादक संक न आनत हैं॥
 हरिवंश-गिरा-रसरीति प्रसिद्ध, प्रतीति प्रगटृ प्रमानत हैं।
 बलि जाँ अपने धरम्मिन की, जे धरम्मी धरम्महि जानत हैं॥



10.

श्रीहरिवंश-धरम्म सुनंत जु, छाती सिरात धरम्मिन की ।
 धरम्म सुनंत प्रसन्न है बोलत, बोलन मीठी धरम्मिन की ॥
 धरम्म सुनंत पुलक्षित रोमन, हौं बलि प्रेमी धरम्मिन की ।
 जु धरम्म सुनाय धरम्महि जाँचत, चाहौं कृपा जु धरम्मिन की ॥



11.

श्रीहरिवंश प्रसिद्ध धर्म, समुझौ न अलप तप ।
 समुझौ श्रीहरिवंश कृपा, सेवहु धर्मिन जप ॥
 धर्मी बिनु नहि धर्म नाहि बिनु धर्म जु धर्मी ।
 श्रीहरिवंश-प्रताप मरम जानहि जे मर्मी ॥



श्रीहरिवंश नाम धर्मा जु रति, तिन शरण्य संतत रहै ।
सेवक निशिदिन धर्मिन मिलें श्रीहरिवंश-सुजस कहै ॥

! जै जै श्रीहित पाके धर्मा लयोदश प्रकरण की जै जै श्रीहित हरिवंश !



14. श्रीहित काचे धर्म प्रकरण





14. श्रीहित काचे धर्म प्रकरण(18)

श्रीहरिवंश-धर्मिन के सँग, आगे ही आगे जु रीति वखानत ।
आपुने जानि कहैं जु मिलै मन, उत्तर फेर चवग्गुन ठानत ॥
बैठत जाय विधर्मिन में तब, बात धरम्म की एकौ न आनत ।
काचे धर्मिन के सुनौ छन्द, धरम्मी धरम्म-मरम्म न जानत ॥





2.

बातनि जूठन खान कहैं मुख, देत प्रसाद अनूठै ही छाँड़त।
ग्रन्थ प्रमानि कै जो समझाइये, तौ तब क्रोध रार फिर माँड़त॥
तच्छिन छाँड़ि प्रेम की बातहिं, फेरि जाति कुल रीति प्रमानत।
काचे धरम्मिन के सुनौ छन्द, धरम्मी धरम्म-मरम्म न जानत॥





3.

धरम्मिन माँझ प्रसन्न है बैठत, जाड विधर्मिन माँझ उपासत।
 लालच लागि जहाँ जैसे तहाँ तैसे, सोई-सोई तिन मध्य प्रकाशत॥
 बादहि होत कुम्हार कौ कूकर, खाली हृदै गुरु-रीति न मानत।
 काचे धरम्मिन के सुनौ छन्द, धरम्मी धरम्म मरम्म न जानत॥





4.

नाना तरंग करत छिन ही छिन, रोवत रैंट न लार सम्हारत ।
 तछिन प्रेम जनाइ कहंत जु, मेरी सी रीति काहे अनुसारत ॥
 तछिन झागरि रिसाइ कहंत जु, मेरी बराबर औरनि मानत ।
 काचे धरम्मिन के सुनौ छन्द, धरम्मी धरम्म-मरम्म न जानत ॥





5.

मेरौ सौ प्रेम, मेरौ सौ कीरतन, मेरी सी रीति काहै न अनुसारत ।
मेरी सौ गान, मेरौ सौ बजाइबौ, मेरौ सौ कृत्य सबै जु बिसारत ॥

छाँडि मर्जादि गुरुन सौं बोलत, कंचन-काँच बराबर मानत ।
काचे धरम्मिन के सुनौ छन्द, धरम्मी धरम्म मरम्म न जानत ॥





6.

देखे जु देखे भले जु भले तुम, आपुनौ और परायौ न जानत ।
 हौं जु सदा रसरीति बखानत, मेरी बराबर ठागन मानत ॥
 कैसैं धौं पाऊं तिहारे हृदै कौं, आन द्वार के मोहि न जानत ।
 काचे धरम्मिन के सुनौ छन्द, धरम्मी धरम्म मरम्म न जानत ॥





7.

और तरंग सुनौ अति मीठी, सखीन के नाम परस्पर बोलत ।
 तच्छिन केश गहंत मुष्ट हनि, साकत शुद्ध बचावत डोलत ॥
 तच्छिन बोलैं तू प्रेत तू राक्षस, फेरि परस्पर जाति प्रमानत ।
 काचे धरम्मिनु के सुनौ छन्द, धरम्मी धरम्म मरम्म न जानत ॥



8.

जान्यौ धरम्म देखी रस-रीति जु, निष्ठुर बोलत वदन प्रकाशित ।
 ऐसे न वैसे रहे मँझरैढव, पाछिलियौ जु करी निरभासित ॥
 है हैं फेरि जैसे के तैसे हम, वारे ते आये सन्यासिन मानत ।
 काचे धरम्मिन के सुनौ छन्द, धरम्मी धरम्म मरम्म न जानत ॥





9.

एक रिसाने से रुखे से दीखत, पूँछत रीति भभूकृत धावत ।
 एक रँगमगे बोलत चालत, मामिलेहु बपुरे जु जनावत ॥
 एक बदन्न के साँची-साँची कहैं, चित्त सचाई की एकौ न आनत ।
 काचे धरम्मिन के सुनौ छन्द, धरम्मी धरम्म न जानत ॥





10.

एक धरम्म समुज्ज्ञे बिनाव, गुसाईं के है जु जगत् पुजावत् ।
 मूल न मन्त्र टटोरा की रीति, धरम्मिन पूँछत बदन दुरावत ॥

एक मुलम्मा सौ देत उघार जु, वल्लभ सौं वल्लभ परमानत ।
 काचे धरम्मिन के सुनौ छन्द, धरम्मी धरम्म न जानत ॥





11.

एक गुरुन्न सौं वाद करत, जु पंडित मानी है जीभहि ऐंठत।
 एक दरव्य के जोर बरब्बट, आसन चाँपि सभा मधि बैठत॥
 एक जु फेरि रीति उपदेशत, एक बड़े है न बात प्रमानत।
 काचे धरम्मिन के सुनों छन्द, धरम्मी धरम्म मरम्म न जानत॥





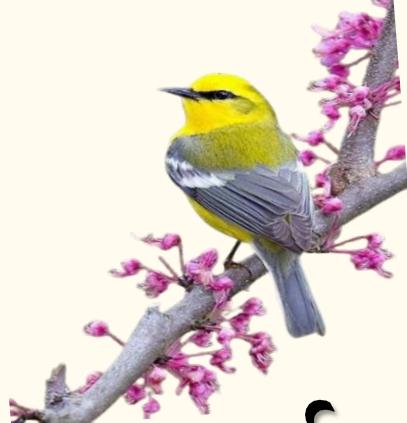
12.

एकधरम्मी अनन्य कहाइ, बड़ाई कौं न्यारी ये बाजी सी माँड़त ।
 और के बाप सौं बाप कहंत, दरब्ब के काज धरम्महि छाँड़त ॥
 बोलत बोल बटाऊ से लागत, है गुरुमानी न बात प्रमानत ॥
 काचे धरम्मिन के सुनौ छन्द, धरम्मी धरम्म मरम्म न जानत ॥



13.

परखे सुनहु सुजान, जहाँ कछु और कचाई ।
 भक्त कहे परसन्न, नतरु ता कहैं बुरबाई ॥
 दिये सराहें सुख रहें दुख में दिन-राती ।
 खैवे कौं जु सजाति, खरच कौं होत विजाती ॥



14.

लै उपदेश कहाइ अनन्य, अन्हाइ अनपित जाइ गटक्कत ।
 आस करें विषयीन के आगे, जु देखे मैं जोरत हाथ लटक्कत ॥
 केतिक आयु कितेक सौ जीवन, काहे विनासत काज हटक्कत ।
 श्रीहरिवंश-धरम्मिन छाँडि, घर-घर काहे फिरत भटक्कत ॥





15.

साकत-संग अगिन्न-लपट, लपट जरत्त क्यौं संगति कीजै ।
 साधु सुबुद्धि समान सु संतन, जानिकैं शीतल संगति कीजै ॥
 एक जु काचे प्रकृति विरुद्ध, प्रकृति विरुद्ध करैं तौ का कीजै ।
 जे आग के दाङ्गे गये भजि पानी में, पानी में आग लगै तो का कीजै ॥





16.

प्रीति भंग बरनत रस रीतहि, श्रीहरिवंश-वचन बिसरावहु ।
 आप आपनी ठैर जहाँ तहाँ, करि विरुद्ध सबपै निदरावहु ॥

एक संसार दुष्ट की संगति, ताहु पै तुम पुष्ट करावहु ।
 विनती करहुँ सकल धर्मिनु सौँ, धर्मी है जिन नाम धरावहु ॥





17.

स्वास्थ सकल तजि, गुरु चरणन भज,
गुन-नाम सुनि कथि, संतन सौं संग करि ॥
काल-व्याल मुख परयौ, कफ वात पित्त भरयौ,
भ्रम्यौ कत अनन्य कहे की जिय लाज धरि ॥





सेवक	निकट	रसरीति	प्रीति	मन	धरि,
हित	हरिवंश	कुल-कानि	सब		परिहरि ।
काचे	रसिकनि	सौं	विनती	करत	ऐसी,
गोविन्द	दुहाई	भाई	जो	न	सेवौ
					श्यामा हरि ॥





18.



प्रगटित श्रीहरिवंश सूर, दुन्दुभि बजाइ बल
 मदन मोह मद मलित निदरि निर्दलित दम्भ-दल ॥
 भर्म भग्य भय-भीत, गर्व दुर्जन रज खण्डन ।
 लोभ-क्रोध कलि कपट, प्रबल पाखण्ड विहंडन ॥





तृष्णा-प्रपंच-मत्सर-बिसन, सर्व दण्ड निर्बल करे।
शुभ-अशुभ-दुर्ग-विध्वंसि बल, तब जयति जयति जग उच्वरे॥

! जै जै श्रीहित काचे धर्मी चतुर्दश प्रकरण की जै जै श्रीहित हरिवंश !



15. श्रीहित अलभ्य लाभ प्रकरण •





15. श्रीहित अलभ्य लाभ प्रकरण (4)



हरिवंश नाम है जहाँ तहाँ-तहाँ उदारता,
सकामता तहाँ नहीं कृपालुता विशेषिये ।

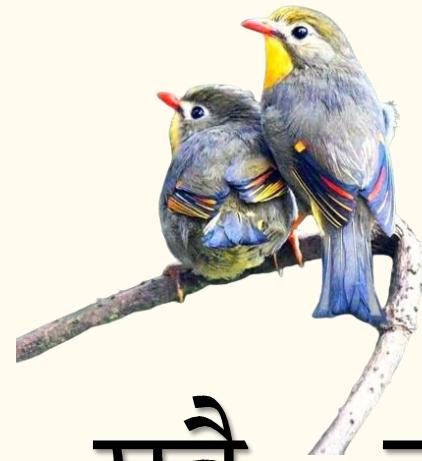
हरिवंश नाम लीन जे अजातशत्रु ते सदा,
प्रपंच दंभ आदि दै तहाँ कछू न पेखिये ॥





हरिवंश नाम जे कहै, अनन्त सुकर्ख ते लहै,
 दुराप प्रेम की दशा, तहाँ प्रत्यक्ष देखिये ।
 सोइ अनन्य साधु सो जगत् पूजिये सदा,
 सु धन्य-धन्य विश्व में जनम सत्य लेखिये ॥1 ॥





हरिवंशचन्द्र जो कही सु चित्त है सबै लही,
 वचन्न चारु माधुरी सु प्रेम सौं पिछानिये ।
 सुनै प्रपन्न जे भये अभद्र सर्व के गये,
 तिन्हें मिले प्रसन्न है न जाति भेद मानिये ॥





सुभाग लागि पाइ है, प्रसंश कंठ लाइ है,
 सिराय नैन देखि कैं, अभेद बुद्धि आनियैं।
 कृपालु है सु भाखि हैं धरम्म पुष्ट राखि हैं,
 श्रीव्यासनन्द नाम कौ अलभ्य लाभ जानिये ॥2॥





हरिवंश नाम सर्व सार छाँडि लेत बहुत भार,
 राज विभौ देखि कैं विषय विषम्म भोवहीं।
 जौरु होत साधु-संग आनि करत प्रीति भंग,
 मान काज राजसीन के जु मुकर्ख जोवहीं ॥





जहाँ तहाँ अन्न खात, सखी कहत आप गात,
 सकल घौस द्वन्द्व जात रात सर्व सोवहीं ।
 प्रसिद्ध व्यासनन्द-नाम जानि बूझि छोडहीं,
 प्रमाद तें लिये बिना जन्म बाद खोवहीं ॥३॥





हरिवंश	नाम	हीन	खीन	दीन	देखिये	सदा,
कहा	भयौ	बहुज्ञ	है	पुरान	वेद	पढ़हीं।
कहा	भयौ	भये	प्रवीन	जानि	मानिये	जगत्,
लोक	रीझि	शोभ	कौं	बनाइ	बात	गढ़हीं ॥





क.हा	भयौ	किये	करम्म	यज्ञ-दान	देत-देत,	
फलन	पाइ	उच्च	उच्च	देव	लोक	चढ़ुहीं ।
परयौ	प्रवाह	काल	के	कदापि	छूटिहै	नहीं,
श्रीव्यासनन्द	नाम	जो	प्रतीति	सौं	न	रटुहीं ॥4 ॥

! जै जै श्रीहित अलभ्य लाभ पंचदश प्रकरण की जै जै श्री हरिवंश !



16. श्रीहित मान सिद्धांत प्रकरण



16. श्रीहित मान सिद्धांत प्रकरण (9)

बानी श्रीहरिवंश की, सुनहु रसिक चित लाइ।
जिहि विधि भयौ अबोलनौ, सो सब कहौं समुझाइ ॥1॥

श्रीहरिवंश जु कथि कही, सोरु सुनाउँ गाइ।

बानी श्रीहरिवंश की, नित मन रही समाइ ॥2॥



श्रीहरिवंश अबोलनौ, प्रगट प्रेम रस सार ।
 अपनी बुद्धि न कछु कहौं, सो बानी उच्चार ॥३ ॥
 हितहरिवंश जु क्रीड़हीं, दंपति रस समृतल ।
 सहज समीप अबोलनौ, करत जु आनंद मूल ॥४ ॥





काहे कौं डारत भामिनी, हौं जु कहत इक बात ।
 नैंक वदन सन्मुख करौ, छिन-छिन कलप सिरात ॥5॥
 वे चितवत तुव वदन-विधु, तू निजु चरन निहारत ।
 वे मृदु चिवुक प्रलोवहीं, तू कर सौं कर टारत ॥6॥





वचन अधीन सदा रहै, रूप समुद्र अगाध ।
 प्राणरवन सौं कत करत, बिनु आगस अपराध ॥७ ॥
 चितयौ कृपा करि भामिनी, लीने कंठ लगाइ ।
 सुख सागर पूरित भये, देखत हियौ सिराइ ॥८ ॥





सेवक शरन सदा रहै, अनत नहीं विश्राम।
वानी श्री हरिवंश की, कै हरिवंशहि नाम ॥९॥

! जै जै श्रीहित मान सिद्धान्त अथवा अबोलनौ सिद्धान्त षोड़ष प्रकरण की जै जै श्री हरिवंश !



श्री सेवक वाणी - फल स्तुति

जयति-जयति हरिवंश नाम रति सेवक बानी ।
परम प्रीति रस रीति रहसि कलि प्रगट बखानी ॥
प्रेम संपत्ती धाम सुखद विश्राम धरम्मिन ।
भनत - गुनत गुन गूढ़ भक्त भ्रम भजत करम्मिन ॥
श्रीव्यासनन्द अरविंद चरन मद, तासु रंग-रस राचहीं ।
'श्रीकृष्णदास' हित हेत सौं, जे सेवक बानी बाँचहीं ॥



कै हरिवंशहि नाम धाम वृन्दावन बस गति ।
 वाणी श्रीहरिवंश सार संच्यौ सेवक मति ॥
 पठन श्रवण जो करै प्रीति सौं सेवक बानी ।
 भव निधि दुस्तर यदपि होय तिहिं गोपद-पानी ॥
 श्रीव्यासनन्द परसाद लहि, जुगल रहसि दरसै जु उर ।
 भनि वृन्दावन हित रूप बलि, सुख बिलसैं भावुक धाम धुर ॥



ग्रन्थ सिन्धु तें सोधि रंग कलि माँहि बढ़ायौ ।
यह हित कृपा प्रसाद् अमी भाजन भरि पायौ ॥
रसिक मनौ सुर सभा आनि तिनकौं दरसायौ ।
श्रीसेवक निजु गिरा मोहिनी बाँट पिवायौ ॥
पठन श्रवण निशि दिन करै, दम्पति सु धाम सुख लहै अलि ।
वाणी स्वरूप हरिवंश तन, भनि वृन्दावन हित रूप बलि ॥



अक्षर अद्भूत चटक, अटक अर्थनि की गहरी ।
 रचना नाना छन्द, परत शोभा की लहरी ॥
 राधा विपुल सुहाग, भरी रत्नाकर वानी ।
 कानन कुंज अनन्त, कूल मित परै न वर्खानी ॥
 अति कमनी वपु जो हरि लखै, सोइ दरसि परयौ हरिवंश तन ।
 भनि वृन्दावन हित रूप बलि, सेवक जु गिरा नित बन्दि मन ॥



बन्दिय सेवक मुख की बानी ।

श्रीहरिवंश नाम की प्रभुता, जिन बहु भाँति बखानी ॥
अनुभव जनित रची छंदन, दम्पति-रति-सदन कहानी ।
रसिकनि श्रवन सुधा अँचवाई, को ऐसौ बड़दानी ॥
भक्त-भूप हितपथ जु उजागर दाइक मान अमानी ।
आसय गहर उदधि हूँतें अति जिन जानी तिन जानी ॥



जहाँ रस-रतन भये उतपति कहूँ, सुने न लघु नद पानी ।
 रसिक जौहरिनु परखे कीमत करत बुद्धि बौरानी ॥
 हितदत विभौ कोष अधिकारी श्रीसेवक अगवानी ।
 कृपा बिना कहि कहि फुरै अस, उक्ति-जुक्ति रससानी
 सब धर्मन कौ धर्म शिखा मणि तहाँ बुद्धि ठहरानी ।
 श्रीहरिवंश हिये की हिलगनि जातें रही न छानी ॥



जयति प्रथम पद पूजन सर्वोपरि श्रीराधा रानी ।
व्यासनन्द बिनु कौन चितावै कानन सुखनि निसानी ॥
मुरलीधर अरधंगी पद्धति आगम निगम बखानी ।
वृन्दावन हित रूप अनन्य धर्म की धुज फहरानी ॥



सेवक सेवकवानी बोलौ ।

रूप-रंग-रस-मद में छाके कुंजन-कुंजन डोलौ ॥
जाके पढ़े-सुने अरु गायें, उपजत प्रेम अमोलौ ।
रसिक मुकुन्द सुमिरि हित चित में, कपट-कपाटनि खोलौ
मन क्रम-वचन लिशुद्ध न कोऊ, सेवक सौ हरिवंश उपासक
आन धरम्मिन संग नहीं, हरिवंश धरम्मिन सौ बिसवासक ॥



हरिवंश पतिव्रत लै निवह्यौ , दुख पाइ खिस्याइ रहे उपहासक ।
हरिवंश कृपा रस मत्त सदा, सोई 'नाथ' कहे अब याम कहा सक
श्रीसेवक वानी जु यह, अति अगाध मत गूढ़ ।
बिरलौ कोई समुझई, हित-मारग-आरुढ़ ॥
हित-मारग-आरुढ़, भाव भागौत मिलै सब ।
चार वेद सुस्मृति जु चार, अवगाहि लेहि जब ॥



तब पावै सेवक हृदै, जु हित मारग उपदेसिय ।
हितबल्लभ गुरु कृपा बल, जो समुझै कोउ धीर धिय ॥

सकल प्रपंच विनाश होत पढ़ सेवकवानी ।
श्रीवृन्दावन बास होत पढ़ि सेवकवानी ॥



व्यासनन्द पद-प्रीति होत पढ़ सेवक वानी ।
श्रीराधावल्लभ मीत होत, पढ़ि सेवक वानी ॥
पढ़िये नित हित रंग सों, सेवक वानी प्रेम भरि ।
सेवकवानी की कृपा, रंगमहल की टहल करि ॥

..... ॥



